Fortnightly per copy Rs. 4/- only

ओ३म्

18th February 2018

# आर्य जीवन

# ఆర్య జీవన్

संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प

హింది-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Date of Publication 2nd & 17th of every month, Date of Posting 3rd & 18th of every month

ऋषि जन्मदिवस एवं बोधोत्सव के संदर्भ पर आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र.-तेलंगाना द्वारा प्रांत की समस्त आर्य समाजों एवं विद्यालयों के विद्यर्थियों के लिए

## महर्षि दयानन्द सरस्वती और आर्य समाज

पर निबंध प्रतियोगिता का आयोजन किया

प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को क्रमशः रु. ५,०००, रु. ३,००० और रु. २,००० की राशी प्रदान की । प्रतियोगिता में भागार्थि सारे विद्यार्थियों को स्मृति चिह्न और प्रमाण पत्र दिए गए

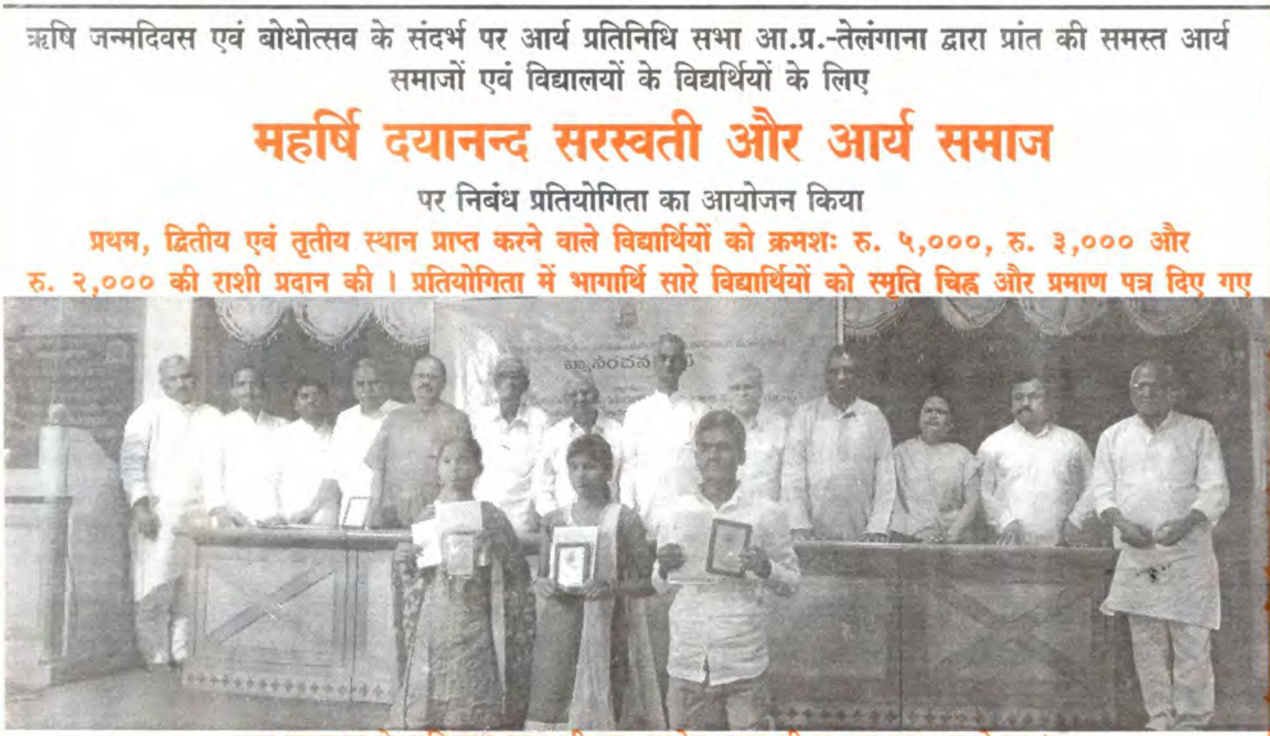

उच्च न्यायालय के अधिवक्ता मान्य श्री एन. अशोक कुमार जी पुरस्कार प्रदान करते हुए ।
सभा प्रधान ठा. लक्ष्मण सिंहजी, मंत्री श्री विठ्ठल राव आर्य जी एवं अन्य अधिकारीगण चित्र में देखे जा सकते है ।
संयोजन समिति के सदस्य श्री आर. रामचन्द्र कुमार जी, हरिकिशन वेदालंकार, आचार्य वेदमित्र जी, आचार्य विश्वश्रवा जी एवं श्री पी. जगनमोहन जी भी चित्र में देखे जा सकते है ।

## कन्या गुरुकुल महाविद्यालय हाथरस का १०८वां वार्षिक उत्सव सम्पन्न

## डॉ. आचार्या पवित्रा विद्यालंकार का जीवन गुरुकुल के लिए समर्पित

गुरुकुल ही वैदिक संस्कृति एवं आर्ष विद्या के समरक्षक -प्रो. विठ्ठल राव, मंत्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

आर्य समाज के बलिदानी इतिहास को व्यर्थ न जाने दे -ठाकुर विक्रम सिंह

समारोह का दृश्य तथा आचार्या पवित्राजी महामंत्री प्रो. विठ्ठल राव सम्मान करते हुए

# "स्वस्थ जीवन का आधार ईश्वरोपासना, अग्निहोत्र, योगासन–व्यायाम एवं शुद्ध शाकाहारी भोजन"

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

आज के समय की सबसे बड़ी समस्या मनुष्य का स्वास्थ्य ठीक न रहना है। स्वास्थ्य का सम्बन्ध हमारे सुखों एवं दीर्घायु से है। यदि हम स्वस्थ हैं तो हम सुखी हैं और दीर्घायु हो सकते हैं और यदि स्वस्थ नहीं तो फिर रोग के अनुसार हम दुःखी रहते हुए अस्पतालों के भारी बिलों से त्रस्त रहते हुए, अनेकानेक दुःख भोगते हुए असमय मृत्यु का शिकार हो सकते हैं। अतः मनुष्य को सबसे अधिक यदि किसी बात पर ध्यान देने की आवश्यकता है तो वह है स्वास्थ्य। संबंधी कुद सरल उपायों पर हम आज चर्चा कर रहे हैं जिससे न केवल हमें स्वस्थ जीवन मिलेगा अपितु इससे हमारे इस जन्म के सुखों में वृद्धि होगी और साथ ही हमारा परजन्म भी सुधरेगा। स्वस्थ रहने के लिए पहला आवश्यक उपाय ईश्वर को जानना और उसके अनुरुप भक्ति करना है। ईश्वर भक्ति से मन शान्त रहता है जिससे मनुष्य स्वस्थ रहता है और उसमें रोगोत्पत्ति की सम्भावना कम व न के बराबर रहती है। ईश्वरभक्ति का एक लाभ यह भी होता है कि वह हर स्थिति में प्रायः शान्त व सन्तुष्ट रहता है। ईश्वरभक्त मनुष्य स्वस्थ व अस्वस्थ जीवन को ईश्वर की ही किसी व्यवस्था का परिणाम मानता है जो कि उसके कर्मों से जुड़ी होती है। मनुष्य जब ईश्वर की भक्ति करता है तो स्तुति, प्रार्थना व उपासना करते हुए वह ईश्वर से सुख, शान्ति, निरोग जीवन सहित ज्ञान वृद्धि व सबके सुख की कामना करता है। ईश्वर सर्वव्यापक व सर्वान्तर्यामी होने से उसकी बात सुनता है और भक्त की पात्रता के अनुसार उसे पूरा भी करता है। ईश्वर भक्ति में किसी प्रकार का कोई धन व्यय नहीं होता परन्तु इससे लाभ सबसे अधिक होता है। वैदिक मान्यताओं के अनुसार मनुष्य को प्रातः व सन्धि वेला में दो समय ईश्वर की भक्ति करनी चाहिये। महर्षि दयानन्द ने ईश्वर भक्ति को सन्ध्या करना बताया है। इसकी सर्वोत्तम चिधि भी सन्ध्या के नाम से उन्होंने लिखी है जिससे लाभ उठाया जाना चाहिये। यह आवश्यक है कि सन्ध्या के साथ वेद व वैदिक साहित्य का अध्ययन तथा स्वाध्याय भी किया जाये। स्वाध्याय भी एक प्रकार की सन्ध्या ही होती है। इसमें ईश्वर के गुणों का अध्ययन करने पर हमारे ईश्वर विषयक विचार दृण होते हैं, ज्ञानवृद्धि होती है जिसका लाभ ईश्वर का ध्यान करने में मिलता है। स्वाध्याय करने से ईश्वर व जीवात्मा सहित प्रायः सभी विषयों का आवश्यकता के अनुरूप ज्ञान हो जाता है जो जीवन में बहुत लाभ पहुंचाता है। स्वाध्याय के लिए वेद सहित उपनिषद, दर्शन, सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय आदि ग्रन्थों का अध्ययन किया जाना चाहिये। अन्य भी अनेक ग्रन्थ हैं जिनसे ईश्वरोपासना एवं जीवन में बहुत लाभ मिलता है।

स्वस्थ जीवन के लिए दैनिक अग्निहोत्र करना भी लाभप्रद होता है। अग्निहोत्र को देवयज्ञ व हवन भी कहते हैं। यह पांच महायज्ञों में मनुष्य का दूसरा प्रमुख कर्तव्य है। इसके करने से वायु की शुद्धि सहित जल की शुद्धि होने सहित अनेक आध्यात्मिक लाभ भी होते हैं। अग्निहोत्र में स्तुति, प्रार्थना, उपासना सहित जो अन्य मन्त्र यज्ञाग्नि में आहुति आदि देने के लिए बोले जाते हैं उनसे भी ईश्वर की प्रार्थना व उपासना होती है। आत्मिक ज्ञान बढ़ने के साथ जीवन की उन्नति होती है जिससे मनुष्य जीवन के सभी क्षेत्रों में सफलता प्राप्त होती है। यज्ञ का प्रमुख द्रव्य गोघृत होता है। इसके दहन से वायु में स्वास्थ्य को हानि पहुंचाने वाले कीटाणुओं का भी नाश होता है। पर्यावरण प्रदुषण भी नष्ट होता व घटता है। हससे हम रोगों से बचते हैं। इससे हमारे शरीर में गोघृत के सूक्ष्म कणों से मिश्रित शुद्ध वायु प्रवेश करती है जिससे रक्त की शुद्धि होने से अनेक रोग ठीक होते हैं। यज्ञ के समय हम ईश्वर से जो स्वास्थ्य, व्यवसाय, रोगनिवृति, सन्तान के सुन्दर भविष्य व अन्य प्रार्थनायें करते हैं वह भी ईश्वर के सर्वव्यापक होने से सुनी जाती हैं और पूरी की जाती हैं। संक्षेप में यहां इतना ही वर्णन कर रहे हैं। स्वाध्याय करने पर यज्ञ वा अग्निहोत्र का विस्तृत ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

मनुष्य का शरीर हाड़–मांस का बना हुआ है। इसे निरोग रखने के लिए आसन व व्यायामों की आवश्यकता है। प्राणायाम भी स्वस्थ शरीर व निरोग जीवन का आधार हैं। प्राचीन काल में रचित अष्टांग योग वा योगदर्शन में महर्षि पतंजलि ने आसन को यम व नियम के बाद तीसरे स्थान पर रखा है। इसका यह अर्थ होता है कि ध्यान व समाधि को सिद्ध करने के लिए पहले यम, नियम व आसनों को सिद्ध करना होगा। यदि यह सिद्ध नहीं होंगे तो ध्यान व समाधि भी सिद्ध नहीं हो सकती। शायद यही कारण था कि महाभारतकाल व उससे पूर्व हमारे देश के लोग सौ वर्ष से भी अधिक जीवित रहते थे। ऐसा होना उस समय आम बात थी। आज भी यदि हम ऐसा करते हैं तो हम स्वस्थ व निरोग रहते हुए दीर्घायु को प्राप्त कर सकते हैं। योग का प्रचार स्वामी रामदेव जी द्वारा विगत अनेक वर्षों से किया जा रहा है। उनके प्रयासों से आसन व प्राणायाम का विश्व स्तर पर सघन प्रचार हुआ है। आज उनके व प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के प्रयासों से विश्व योग दिवस तक मनायें जाने लगे हैं। योग पूरे विश्व में प्रतिष्ठा को प्राप्त हुआ है जिसका मुख्य कारण इससे

....शेष ४ पेज पर

ऋषि बोध दिवस

# वैदिक जीवन पद्धति को अंगीकृत करने का संकल्प दिवस"

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

आज ऋषि बोधोत्सव ऋषि जन्म भूमि टंकारा सहित देश देशान्तर में मनाया जा रहा है। आज शिवरात्रि के ही दिन आज से 179 वर्ष पूर्व ऋषि को टंकारा के शिव मन्दिर में शिव की मूर्ति के सम्मुख यह बोध हुआ था कि शिव व अन्य किसी देवता की मूर्ति की पूजा करना मनुष्य के लिए किसी भी प्रकार से लाभप्रद नहीं है। उन्होंने इस बोध के होने पर अपना सारा जीवन ईश्वर के सच्चे स्वरूप के ज्ञान व उसकी उपासना विधि को जानने में लगाया। कालान्तर में उनको सत्य ज्ञान प्राप्त हुआ कि ईश्वर तो सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वज्ञ, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर अभय, नित्य, पवित्र व सृष्टिकर्ता आदि गुण, कर्म व स्वभाव वाला है। उसी की उपासना हमें महर्षि पतंजलि के योगदर्शन व ऋषि दयानन्द जी द्वारा वेदों के आधार पर रची गई 'सन्ध्या विधि' से करनी चाहिये। ईश्वर के सत्य स्वरूप, मनुष्य के कर्तव्य व ईश्वर की यथार्थ उपासना विधि को जान लेने के बाद उन्होंने अपने वेद, वैदिक शास्त्रों और योग विद्या आदि के ज्ञान से संसार के लोगों को अवगत कराया। उन्होंने मौखिक प्रचार किया और साथ ही वेद प्रचार को स्थायीत्व प्रदान करने के लिए सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, वेदभाष्य, संस्कारविधि, आर्याभिविनय, व्यवहारभानु सहित अनेक ग्रन्थो की रचना की। महर्षि दयानन्द ने वेद ज्ञान सहित इतर जितना भी ज्ञान प्राप्त किया वह सब शिवरात्रि के दिन हुए उस बोध का ही परिणाम था और इसमें शिवरात्रि के बाद घटी दो घटनाओं, बहिन की अचानक हैजे से मृत्यु और चाचा की मृत्यु भी, रहीं जिससे उन्हें संसार से वैराग्य हो गया था।

ऋषि बोधोत्सव का दिन हमें जीवन में एक संकल्प लेने का दिन प्रतीत होता है। संकल्प इस बात का कि हम ऋषि के जीवन चरित का अध्ययन कर अपने जीवन को भी वेद ज्ञान से सुशोभित व सुरभित करेंगे। ईश्वर भक्त बनेंगे और वेद ज्ञान का प्रचार व प्रसार करेंगे जो कि प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है। हमें दो सुधार करने हैं प्रथम अपना सुधार। इसके लिए हमें स्वयं को वेदों की शिक्षाओं के अनुरुप विचार एवं आचरण वाला बनाना होगा और द्वितीय हमें यथाशक्ति आर्यसमाज के संगठन के अन्तर्गत संगठित होकर, लोकैषणा का त्याग कर, वैराग्यवान होकर वैदिक विचारधारा का जन जन में प्रचार करना है। दूर दूर तक न सही, अपने आसपास के लोगों को अपने व्यक्तित्व व कृतित्व से तो हम प्रभावित कर ही सकते हैं। चारों वेदों के साक्षात्कृतधर्मा ऋषि महर्षि मनु ने कहा है कि 'वेदखिलो धर्मऽमूलम्' अर्थात् वेदों का ज्ञान व आचरण ही मनुष्य के धर्म का मूल अर्थात् आधार है। वेद ज्ञान से रहित मनुष्य पशु समान होता व हो जाता है। यदि कोई मनुष्य सद्गुणों से विभुषित है और वेदों से उसका सम्पर्क नहीं है, तो यह मानना चाहिये कि वेदों से निकल कर वह गुण उस व्यक्ति तक उसके माता–पिता व आचार्यों के द्वारा व पूर्व जन्म के संस्कारों वा ईश्वर की कृपा से ही पहुंचे हैं। सत्य बोलने और धर्म पर आचरण की शिक्षा का आरम्भ वेद ज्ञान से ही हुआ है। आज यदि वेदानभिज्ञ मनुष्य इसका समर्थन करते हैं तो भले ही उनको इस बात का ज्ञान न हो परन्तु यह शिक्षा उन तक वेदों से ही चलकर पहुंची है, ऐसा जानना व मानना चाहिये। अतः वेदों की सभी मान्यताओं व सिद्धान्तों का प्रचार संसार में होना चाहिये। वेदों के नाम से यदि प्रचार होता है तो इससे लोगों को यह लाभ होगा कि उन्हें वेदों के महत्व का ज्ञान भी होगा और वह अपनी प्रत्येक भ्रान्ति को वेदाध्ययन व वेद की सहायता से दूर कर सकते हैं।

अपने सीमित वेदाध्ययन से हम यह भी अनुभव करते हैं कि जो लोग वेद ज्ञान से दूर हैं वह अनेक प्रकार की भ्रान्तियों से ग्रस्त हैं। हमें यह मनुष्य जीवन हमारे पूर्व जन्मों के सद्कर्मों के आधार पर मिला है। हमारे जीवन के सभी सुख व दुःख हमारे पूर्व व वर्तमान जीवन के कर्मों का ही परिणाम हैं। हमारा परजन्म, मृत्यु के बाद होने वाला जन्म, भी हमारे इस जन्म व पूर्व के अभी न भोगे गये कर्मो के आधार पर ही होगा। अतः हमें अपने कर्मों पर ध्यान देना आवश्यक है। यह कार्य केवल वेदों व ऋषियों के ग्रन्थों के अध्ययन से ही सम्भव हो सकता है। श्रेष्ठ परजन्म के लिए हमें ईश्वरोपासना एवं यज्ञादि कर्मों में रूचि लेनी होगी और पंचमहायज्ञों के सम्पादन में प्रमाद से बचना होगा। इसके लिए ऋषि ग्रन्थों का अध्ययन कर अपने ज्ञान को बढ़ाया जा सकता है। उपनिषद एवं दर्शनों का अध्ययन भी हमारे कर्तव्यों के बोध में अत्यधिक सहायक होता है। इन सभी ग्रन्थों के अध्ययन से किसी को भी विमुख नहीं होना चाहिये।

ऋषि दयानन्द बोध से हमें यह भी प्रेरणा मिलती है कि हमें एकांगी नहीं अपितु सर्वांगीण जीवन व्यतीत करना है। हमें स्वास्थ्य के सभी नियमों का पालन करते हुए स्वस्थ रहते हुए अपनी आयु को बढ़ाना है अर्थात् अपनी आयु को

....शेष ४ पेज पर

....पृष्ठ ३ का शेष

किसी बुरे कर्म से घटाना नहीं है। वेद एवं वैदिक ग्रन्थों का स्वाध्याय कर हमें अपने कर्तव्यों का ज्ञान प्राप्त करना है एवं उन सभी कर्तव्यों का यथाशक्ति पालन करना है। सभी मनुष्यों को अविद्या के नाश व विद्या की वृद्धि के लिए पुरुषार्थ करना चाहिये। यह बोध भी ऋषि दयानन्द जी ने हमें कराया है। इसका एक अर्थ यह भी है कि हमें अवैदिक वा वेदविरुद्ध विचारों का खण्डन और वेद सम्मत विचारों व मान्यताओं का युक्ति, तर्क व प्रमाणों से मण्डन करना है। हमें मूर्तिपूजा के साथ व्यक्तिपूजा, कब्र पूजा, मृतक लोगों के चित्रों की पूजा आदि का खण्डन करना होगा। ईश्वर के स्थान पर आज लोग अपने अपने गुरूओं की पूजा को ही ईश्वर स्तुति–प्रार्थना–उपासना का पर्याय मानने लगे हैं, उनसे भी लोगों को सावधान करना होगा। इन अंधविश्वासों से देश कमजोर हो रहा है। लोगों का बहुत सा समय इन गुरुओं की शरण में उनका भजन–कीर्तन आदि में व्यर्थ होता है जिससे देश के आगे बढ़ने में रूकावट आती है। ऐसे लोग देशोन्नति में अधिक सहायक नहीं होते हैं। हमने अनुभव किया है कि यूरोप की प्रगति में संगठित ज्ञान विज्ञान के अध्ययन, विचार–विनिमय, गोष्ठी आदि के द्वारा उन्नति का विशेष योगदान है। यह सभी लोग अन्धविश्वासों से प्रायः मुक्त थे। ऐसे ही देशवासी हमारे देश को भी उन्नति के पथ पर ले जा सकते हैं। इसका भी आंकलन कर हमें प्रचार करना चाहिये और लोगों को मिथ्या पूजा व उपासना से हटा कर वेदसम्मत योगविधि व सन्ध्या आदि के द्वारा ईश्वर उपासना का प्रचार करना है। ऋषि जीवन ने देश को जो ज्ञान व दर्शन दिया है उसके आधार पर वैदिक धर्म संसार का ज्ञान व विज्ञान से युक्त एकमात्र धर्म सिद्ध होता है। वेद प्रचार की न्यूनता ही है कि देश व विश्व में आज भी अज्ञान, मिथ्या मत–मतान्तर, मिथ्यापूजापाठ व इनकी जननी अविद्या विद्यमान है। वेद प्रचार को कैसे अधिकाधिक लोगों तक पहुंचाया जाये इस पर आर्यसमाज व ऋषिभक्तों को विचार करना है। देश में हिन्दुओं की घट रही जनसंख्या व दूसरे मतों की संख्या में वृद्धि भी हमारे लिए विचार व चिन्तन का विषय होनी चाहिये। इसके भविष्य में दुष्परिणामों पर भी हमें विचार करना चाहिये और आवश्यक उपाय करने चाहिये जिससे आर्य हिन्दु समाज अल्पसंख्यक होने से बच सके। अल्पसंख्यक होने का क्या दुष्परिणाम हो सकता है, यह विश्व के विगत एक डेढ़ हजार वर्षों के इतिहास के अध्ययन से जाना जा सकता। अवैदिक पूजा, असंगठन, सामाजिक विषमता आदि का परिणाम ही तो हमने विगत लगभग 1 हाजर वर्षों तक भोगा है जिसमें विधर्मियों की गुलामी, अन्याय व अत्याचार सम्मिलित हैं। हमें लगता है कि हमने इन घटनाओं से कोई शिक्षा नहीं ली है। आज भी हम उन विधर्मियों की पराधीनता व उनसे मिले दुखों के कारणों का ही सेवन कर रहे हैं। अतः ऋषि बोध दिवस पर हमें सभी क्षेत्रों में सावधान होना है।

....पृष्ठ २ का शेष

होने वाले स्वास्थ्य लाभ व सुखी जीवन को दिया जा सकता है। वैज्ञानिक दृष्टि से भी यज्ञ द्वारा स्वास्थ्य लाभ व सुखी जीवन की पुष्टि हो चुकी है। अतः योगासन व प्राणायाम को भी प्रातः व सायं करने का अभ्यास करना चाहिये। ऐसा करके हम सुखी रह सकते हैं।

स्वास्थ्य में विकार का एक कारण हमारा अभक्ष्य पदार्थों से युक्त व असन्तुलित भोजन भी हुआ करता है। हमें सदैव शुद्ध, पवित्र, शाकाहारी व पौष्टिक भोजन ही करना चाहिये। मांस, अण्डे, मछली, धूम्रपान, असयम भोजन, फास्ट फूड, रसायन युक्त पेय पदार्थ, मदिरा वा शराब आदि से स्वास्थ्य को हानि पहुंचती हैं। दाल, रोटी, हरी तरकारियों से युक्त भोजन, मौसमी फलों सहित गोदुग्ध स्वस्थ जीवन का आधार है। बादाम, काजू, किसमिश आदि का सेवन भी करना लाभप्रद होता है। यदि हम समय पर अल्प मात्रा में शाकाहारी भोजन करते हैं तो इससे हमारा स्वास्थ्य ठीक रहेगा, रोग होंगे नहीं अथवा कम से कम साध्य कोटि के होंगे जिसे आयुर्वेद व योगाभ्यास से ठीक किया जा सकेगा। इस ओर प्रत्येक मनुष्य को ध्यान देना चाहिये। ब्रह्मचर्य का पालन भी स्वस्थ जीवन का आधार है। श्री राम, श्री कृष्ण, ऋषि दयानन्द, चाणक्य, आचार्य शंकर आदि सभी ब्रह्मचारी थे। ब्रह्मचर्य की शक्ति से ही वह मेधा बुद्धि को प्राप्त कर सके तथा जीवन में अनेक महत्वपूर्ण व मानवता के उपकार के कार्य कर सके। ब्रह्मचर्य का भी जीवन में ध्यान रखना चाहिये। यह आम मनुष्य के लिए भी साध्य है।

स्वस्थ जीवन धारण करने में दिनचर्या का भी महत्वपूर्ण स्थान होता है। समय पर सोना व समय पर जागना भी मनुष्य को स्वस्थ रखता है। प्रातःकाल भ्रमण करना स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद होता है। ऋषि दयानन्द जी का जीवनचरित पढ़ने पर ज्ञात होता है कि वह प्रातः भ्रमण के लिए जाते हैं। बरेली प्रवास के दौरान स्वामी श्रद्धानन्द जी उनके सम्पर्क में आये थे और उन्होंने स्वामी दयानन्द के प्रातः लगभग 3 बजे भ्रमण पर जाने की दिनचर्या का वर्णन किया है। स्वस्थ व सुखी जीवन की प्राप्ति के लिए किसी मनुष्य को किसी के साथ अन्याय व उसका शोषण नहीं करना चाहिये। जितना बन सके परोपकार के कार्य भी करने चाहियें। सज्जन पुरुषों की मित्रता और दुर्जनों से दूरी रखना भी मनुष्य को सुखी रखता है। हम यह भी अनुभव करते हैं कि मनुष्य को वेद आदि साहित्य के साथ ऋषि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, पं. लेखराम आदि के जीवन चरित भी पढ़ने चाहियें। इनसे हम अपनी दिनचर्या का सुधार कर सकते हैं और अनेक उपयोगी जानकारियों भी प्राप्त कर सकते हैं। हम आशा करते हैं कि इन कुछ उपायों पर यदि हम ध्यान देते हैं तो हमें अवश्य लाभ होगा। इसी के साथ इस चर्चा को विराम देते हैं।

# वासन्ती (आपाढ़ी) नवसस्येष्टि

-पं. भवानी प्रसाद

ऋतुराज वसन्त का आविर्भाव हो चुका है। लगभग सवा मास व्यतीत हुआ है, जब उस की अगवानी का उत्सव बसन्तपञ्चमी पर्व मनाया गया था। तब से अब प्रकृति की छटा में बहुत परिवर्तन आ गया है। उस का रूप दिनों दिन रम्य से रम्यतर होता जा रहा है। आज वसन्त-श्री अपने यौवन पर है। वनोपवन और नगर-ग्राम में सर्वत्र उस का नयताभिराम वरविकास मन को मोद से भर रहा है, चराचर जगत् ने इसी आनन्द से प्रफुल्लित होकर नवीन बाना बदल लिया है। वनो-पवनों में नवविकसित कुसुमों को बहार है तो खेतों में परिपक्व यव और गोधूम के शस्यों की सुनहरी सरिता तरंगित हो रही है। पशुओं ने नवीन रोमावली के चित्र-विचित्र अभिनव परिधान धारण किये है। पक्षिसमूह ने भी पुराने पर झाड़कर नूतन पक्षावली का परिच्छद पहना है। उन की चारु चहचहाहट में सुन्दर सरसता का संचार हो गया है। कलकण्ठा कोकिला की कूक, मयूर की केका, तरुणा तितिरि (तीतर) का तारस्वर तथा कलकूजन, कपोत का कलरव वायुमण्डल को मधुरिमा से परिपूर्ण कर रहा है। मंलयाद्रि का घोर सुगन्ध समीर अठखेलियाँ करता चल रहा है। ऐसे उदार और मनोहर सुसमय में आषाढ़ी शस्य के शुभागमन को शुभाशा भारत को प्रधान जनता और सब के अन्नदाता कृष्क-समूह के मन में मोद भर देती है।

आषाढ़ी शस्य (साढ़ी) की फसल भारत को सब फसलों में सर्वश्रेष्ठ है। वह अब फसलों की सिरमौर गिनी जाती है। भारत में अकाल पड़ने पर साढ़ी बहुत ही कम मारी जाती है, वह केवल भूखे भारत का ही पेट नहीं भरती, प्रत्युत पूर्व समय में सभी धनधान्य समृद्ध योरुप आदि विदेशों को भी करोड़ों मन अन्न पहुंचाती थी। ऐसे जीवनाधार सर्वपालक शस्य को अवाई पर कृषकों का मन, जिन्होंने आषाढ़ से लेकर वर्षा भर कड़ी जुताई करके अपने खेतों की तैयारी की थी, आनन्द से क्यों न बल्लियों उछलने लगें। इस अवसर पर उन का आनन्दोत्सव और रंगरेलियां मनाना स्वाभाविक ही है। यह भारतवर्ष की ही विशेषता नहीं, प्रत्युत अन्य देशों में भी नवशस्य के प्रवेश पर पर्व और उत्सव मनाये जाते हैं। ऋक्षराज रूस के हिमाच्छादित देश में फसल काटने पर कृषक अपने इष्ट मित्रों, को पक्वान्न से परितृप्त करके उत्सव मनाते हैं। भुवन-भास्कर की भूमि आपान में भी, जब धानों की फसल कटती है, तब धान की सुरा और चावलों को रोटियों के सहभोज हेते हैं और गानवाद्यपूर्वक पर्व मनाया जाता है। योरुप में सेन्ट वेलन्टाइन (St. Valentine's day) का दिन और इङ्गलेण्ड में पोल (May Pole) के उत्सव भी इसी प्रकार के होते हैं। उन की सीधी सादी अरल जीवन-प्रणाली में ही उनका आदर होता है। विविध प्रकार के उद्योग-धन्धों में फंसे हुए, जीवन की घुड़दौड़ में रात दिन व्यस्त, स्वार्थान्ध नागरिकों में इस प्रकार के उत्सवों के लिए उत्साह ही उत्पन्न नहीं होता।

किन्तु भारतीय उत्सव केवल आमोद-प्रमोद का हो साधन नहीं है। दर्मपरायण भारतीयों को प्रत्येक बात में धार्मिकता और वैज्ञानिकता की पुट लगी हुई है। जिस प्रकार वर्षा ऋतु के चातुर्मास्य (चौमासे) के पश्चात् विकृत गृहों के परिमार्जन (लिपाई-पुताई) के लिए तथा शारद नव ऋतु के प्रवेश पर, नवाविर्भूत रोगों के प्रतीकारार्थ होम-यज्ञ द्वारा वायुमण्डल की संशुद्धि, नवप्रविष्ट शोत काल के निवारक परिधानों के परिवर्तन और नवप्राप्त श्रावणी शस्य के नवीन अन्न, धानों की लाजाओं के होमने के लिए शारदीय नवशस्येष्टि (दीपावलो) का पर्व नियत है। उसी प्रकार शोतकालीन वर्षा (मुहासा) के अनन्तर-मुहासा भी एक प्रकार का चौमासा ही समझा जाता है। आवासों की परिष्कृति के लिए तथा वसन्त की नई ऋतु बदलने पर अस्वास्थ्य के प्रतिरोधार्थ हवन से वातावरण के संस्कारार्थ, नवागत ग्रीष्मोचित हलके फुलके श्वेत वस्त्रों के बदलने और नई आई हुई आषाढ़ी फसल के यवों (जौओं) से देवयज्ञ करने के लिए आषाढ़ी नवसस्येष्टि अभिप्रेत है। (इसके प्रमाण आवणी नवान्नेष्टि (दीपावली) के प्रकरणा में देखिए।)

संस्कृत में अग्नि में भूने हुए श्रर्द्ध-पक्व अन्न को "होलक" कहते हैं। इस विषय में निम्नलिखित प्रमाण द्रष्टध्य हैं-

"तृणाग्निभृष्टार्द्धपक्वशमीधान्यं होलकः।
होला इति हिन्दी भाषा।"

(शब्दकल्पद्रुमकोशः)

अर्द्धपक्वशमीधान्यैस्तृणाभृष्टैश्च होलकः।
होलकोऽल्पानिलो, मेदःकफदोषश्रमापहः ॥
वेदथो होलको यस्य स तत्तद्गुणो भवेत्।

(भावप्रकाश)

अर्थ-तिनकों की अग्नि में भूने हुए अधपके शमीधान्य (फली वाले अन्न) को 'होलक' (होला) कहते हैं। होला स्वल्पवात है और मेद (चर्बी), कफ और श्रम (थकान) के दोषों को शमन करता है। जिस-जिस अन्न का होला होता है, उस में उसी अन्न का गुणहोता है। ऐसा प्रतीत होता है कि आदि में तृणाग्नि में भूने आषाढ़ी के प्रतेयक अन्न के लिए 'होलक' शब्द प्रयुक्त होता था, किन्तु पीछे से वह शमीधान्यों (फलीयुक्त) के होलों के लिए ही रूढ़ हो गया था। हिन्दी का प्रचलित "होला" शब्द इसी का अपभ्रंश है। आषाढ़ी नवान्नेष्टि में नवागत अधपके यवों के होम के कारण उस को "होलकोत्स" कहते थे। उस में होलक या होले हुतशेष रूप से भक्षण किए जाते थे और उन के सतू (सक्तु) का प्रयोग भी इसी पर्व में प्रारम्भ होता था। सतू ग्रीष्म का विशेष आहार है और उस के पित्तादि दोषों को शमन करता है। जैसा कि कई अन्य पर्वों के वर्णान में वतलाया जा चुका है। भारतीयों के विशेष-विशेष पर्व विशेष-विशेष आहारों के प्रयोगों के आरम्भ के लिए निर्दिष्ट है। उसी प्रकार यह होलकोत्सव होलों और उनके बने हुए सत्तुओं के उपयोग के लिए उद्दिष्ट है।

वैदिक धर्मावलम्बियों में प्राचीन काल से यह प्रथा चली आती है कि नवीन वस्तुओं

की देवों को समर्पणा किए बिना अपने उपयोग में नहीं लाया जाता है । जिस प्रकार मानव देवों में ब्राह्मण सर्वश्रेष्ठ हैं, उसी प्रकार भौतिक देवों में अग्नि सर्वप्रधान है । वह विद्युत् रूप से ब्रह्माण्ड में व्यापक है और भूतल पर साधारण अनल, जल में बड़वानल, तेज में प्रभानल, वायु में प्राणापानानल और सर्व प्राणियों में वैश्वानर के रूप में वास करता है । श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीकृष्णा जी कहते हैं-

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः ।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम् ॥

अर्थ-मैं प्राणियों में वैश्वानर रूप होकर देह के आश्रय रहता हूं और प्राणापान वायु के साथ मिलकर चार प्रकार के (भक्ष्य, भोज्य, लेह्य और चोष्य) अन्न को पकाता हूं ।

देवयज्ञ का प्रधान साधन भौतिक अग्नि ही है, क्योंकि वह सब देवों का दूत है । वेद में उस को अनेक वार 'देवदूत' कहा गया है । वही सब देवों को होमे हुए द्रव्य पहुँचाता है । इसलिए नवागत अन्न सर्वप्रथम अग्नि के ही अर्पण किए जाते हैं और तदनन्तर मानवदेव ब्राह्मणों को भेंट करके अपने उपयोग में लाए जाते हैं । श्रुति कहती है-"केवलाघो भवंति केवलादी ।"

अर्थ-अकेला खाने वाला केवल पाप खाने वाला है ।

मनु महाराज इसी का समर्थन इस प्रकार करते हैं-

अधं स केवलं भुङ्क्ते यः पचत्यात्मकारणात् ।
यज्ञशिष्टाशनं ह्येतत्सतामन्नं विधीयते ॥

अर्थ-जो पुरुष केवल अपने लिए भोजन पकाता है, वह पाप भक्षण करता है । यज्ञशेष वा हुतशेष ही सज्जनों का (भोक्तव्य) अन्न विधान किया गया है ।

इसलिए अब तक भी जन साधारण में यह प्रथा प्रचलित है कि जब तक नवीन अन्नों वा फलों को पूजा के प्रयोग में न लाया जाये, तब तक उन को लोक भाषा में "अछूत वा छूते" कहते हैं ।

तदनुसार ही आषाढ़ी की नवीन फसल आने पर नये यवों को होमने के लिए इस अवसर पर प्राचोन काल में नवसष्येष्टि, होलकेष्टि वा होलकोत्सव होता था ।

जहां प्रत्येक गृह में पृथक्-पृथक् नवसस्येष्टि की जाती थी, वहां प्रत्येक ग्राम में सामूहिक रूप से सम्मिलित नवसस्येष्टि भी होती थी और उस में सब लोग अपने-अपने धरों से यवादि आहवनीय पदार्थ लाकर चढ़ाते थे । वर्तमान समय में काष्ठ और कण्डों (उपलों) के ढेरों के रूप में होली जलाने की प्रथा प्राचीन सामूहिक नवसस्येष्टियों का विकृत रूप है । उस में आहवनीय सामग्री का हवन तो कुटिल काल की गति में लुप्त हो गया है और केवल काष्ठ तथा अमेध्य द्रव्यों का जलाना और यवों की बालों का भूनना रूढ़िवा लकीर के रूप में रह गया है ।

इस आषाढ़ी नवान्नेष्टि का उपर्युक्त देवयज्ञ द्वारा देवपूजन विद्वत्समादर, वायु-संशोधन, गृह-पपरिनार्जन तथा नवीन वस्त्र परिवर्तन धार्मिक और वैज्ञानिक स्वरूप है ।

इस अवसर पर गान-वाद्य द्वारा आमोद और हर्षोल्लास तथा इष्टमित्रों का सप्रेम सम्मेलन उस के आनुषङ्गिक उपयोगी लौकि अंग हैं । जो समय हमारे लिए वर्ष भर तक अन्न प्रदान करते रहने की व्यवस्था करता है, उस को मंगलमूल वा सौभाग्यसूचक समझ कर उस पर परमेश्वर के गुणानुवाद पूर्वक आनन्दोत्सव मनाना स्वाभाविक ही है । परस्पर प्रेम परिवर्धन का भी यह बड़ा उपयुक्त अवसर है ।

इस पर्व पर सब लोग ऊंच-नीच, छुटाई-बड़ाई का विचार छोड़ कर स्वच्छ हृदय से आपस में मिलते है । यदि किसी कारणावश वर्ष में वैर विरोध ने मनों को अपना आवास बना लिया है तो उन को अग्निदेव की साक्षी में भस्मसात् कर लिया जाता है । अतः होली प्रेमप्रसार का पर्व है । यह दो फटे हृदयों को मिलाती है, एकता का पाठ पढ़ाती है, यह वर्ष भर प्रम में तन्मय हो जाने को सब से उत्त साधक है । आज घर-घर मेल-मिलाप है, घर-घर वर्ष भर के बैरो एक-दूसरे का गले लगा कर फिर भाई-भाई बन जाते हैं । आज बालवृद्ध वनिताओं की उछाह भरी उमंगें कलह-कालुष्य और वैमनस्य के विकारों का विलोप कर देती हैं । होली के शुभ अवसर पर भारत में हष की कल्लोल-मालाएं उठती हैं । यह पव प्रत्येक हिन्दू के घर भारतवर्ष में इस सिरे से उस सिरे तक समान रूप में मनाया जाता है । होली का पवित्र पर्व वस्तुतः आनद और उल्लास का महोत्सव था, किन्तु काल को कराल गति से आजकल उस में भा कदाचार और अभद्र दृश्य प्रवेश पा गये हैं । आजकल जिस प्रकार से हमारे हिन्दू भाई होली मनाते हैं, उस को देखकर क्या कोई भी बुद्धिमान्, धार्मिक पुरुष यह मान सकता है कि यह होली जिस को देखकर शिक्षित और सज्जन विदेशो लोग हमें नीमवहशी (अर्द्ध बर्बर) का खिताब देते हैं । हमारे उन्हीं पूर्व पुरुषों की चलाई हुई हो सकती है कि जिन को विद्या और बुद्धि को देखकर सारा संसार विस्मित है और जिन के रचित ग्रन्थों और शिल्प-निर्माणों को देखकर क्या स्वदेशी और क्या विदेशी सभी सहस्त्र मुख से उन की उच्च सभ्यता की प्रशंसा करते हैं । क्या आजकल होली में गाली-गलौज या वकदास और अश्लील शब्दों का उच्चारण हमारे उन ऋषियों ैर ब्राह्मणों का चलाया हो सकता है जिन के सिद्धान्त में मन में भी ऐसे अश्लील और जघन्य विझरों का सोचना तक पाप समझा जाता है ? क्या आजकल की होली में बड़े भाइयों की स्त्रियों की स्त्रियों वा भाभियों से होली खेलना वा दूसरे शब्दों में कुचेष्टाएं करना उन आर्य पुरुषों का चलाया हो सकता है, जो भाभियों को मांता के समान समझते थे और उन को प्रणाम करते हे भी उन के चरणों को छोड़ कर उन के अन्य अंगों पर दृष्टिपात तक करना पाप समझते थे । देखिये, जिस समय श्री सीता को रावणा चुरा ले गया था, तब वे विलाप करती हुई अपने आभूषण और चीर मार्ग में फेंकती गई थीं । ये आभूषण एक पोटली में बन्धे हुए सुग्रीव के महामन्त्री हनुमान् ने उठाये थे । वाल्मीकिरामायण, अरण्यकाण्ड सर्ग १४, श्लोक ५९३-५९४ के अनुसार "एक पर्वत पर बैठे हे पांच वानरों को देख सीता ने अपना रेशमी दुपट्टा और मांगलिक आभूषण उतार दुपट्टे में बांध उन वानरों के मध्य इस आशा से फैंक दिये कि सम्भव है, ये राम को मेरा वृत्तान्त बता सके । जल्दी के कारण रावणा सीता के इस कार्य को देख नहीं सका ।"

किष्किन्धा काण्ड सर्ग ६, श्लोक १२५ से १३२ तक सुग्रीव द्वारा दुपट्टे में बंधे कुछ आभूषरणों का जब बर्गान किया गया और राम के आग्रह पर सुग्रीव उन आभूषणों को दिखाने के लिए राम के पास लाया, तब शोकसंतप्त, रघुकुलनायक, मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी अपने प्रिय भ्राती श्री लक्ष्मण जी से पूछते हैं कि भ्राता, देखो तो ये चीर और आभूषण तुम्हारी भाभी के ही हैं ? श्रीलक्ष्मण यति के उत्तर को आदि कवि थी वाल्मीकि ऋषि यों वर्णन करते हैं -

नाह जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले ।
नूपुरेतु विजानामि नित्यं पादाभिवन्दनात् ॥
बा.रा., कि.कां., सर्ग ६ । श्लोक १३४ ।

आजकल भाभियों से होली खेलने के रसिया क्या उन्हीं मर्यादपुरुषोत्तम राम और लक्ष्मण यति के कुल से होने का अभिमान कर सकते हैं कि जिन का कथन ऊपर उद्धृत किया गया है ? फिर आजकल होली में जो आर्य सन्तान मद्य, भांग और दूबिया पीकर उन्मत्त होते हैं (दूध जैसे अमृत समान पदार्थ को मांग जैसे मादक और बुद्धिनाशक द्रव्य में मिलाकर अनर्थ करते हैं) बुद्धि जैसे उत्तम और धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के देने वाले पदार्थ का नाश करके ईश्वर के अपराधी बनते है । उन से बढ़ कर और कौन पाप का भागी बन सकता है ? बुद्धि सा बहुमूल्य और श्रेष्ठ पदार्थ इस संसार में कोई दूसरा नहीं है । यह ईश्वर की देनों में से सब से उत्तम देन है । बिना बुद्धि के लौकिक और पारमार्थिक कोई भी काम सिद्ध नहीं हो सकता । इस लिए बुद्धि के लिए वैदिकधर्मी मात्र नित्य गायत्री में ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि ''धियो यो नः प्रचोदयात् ।'' अर्थात् वह हमारी बुद्धि को प्रेरित करे । उस बुद्धि को होली में नशा पीकर भ्रष्ट और मलीन करने वाले क्या कमी ऋषि-मुनियों के मानने वाले और धर्मानुयायी ही सकते हैं । जिन के अग्रगन्ता महर्षि मनु ने अपने धर्मशास्त्र में मद्यपों के लिए यह प्रायश्चित बतलाया है कि-

सुरां पीत्वा द्विजो मोहादनिवर्णां पिबेत् ।
तथा स काये निर्दग्धे किल्विषात्तः ॥

अर्थ-मध्य पीने वाला पापी अग्नि से तपाई हुई मद्य पीकर स्वशरीर को नष्ट कर देवे ।

जिस मद्यपान के लिए कठिन प्रायश्चित मनु भगवान् ने रक्खा है और उस की महापातकों में गणना की है, आप समझ सकते हैं कि उस से बढ़कर कौन महापाप हो सकता है ? कोई भंगड़ वा भंग पीने वाला शायद यह शंका करे कि मनु महाराज ने तो स्वनिषेध वाक्य में केवल सुरा=मद्यय शब्द का प्रयोग किया है, इस में भंग आदि का निषेध कहां से आ गया ? ऐसी शंका करने वाले महाशयों को सुश्रुताचार्य का यह वाक्य भी सुन रखना चाहिए-''बुद्धि लुम्पति यद्द्रव्यं मदकारि तदुच्यते ।'' अर्थात् जो पदार्थ बुद्धि का नाश करे उन को मदकारि वा 'मद्य' कहते हैं । आप स्वयं सोच सकते हैं कि भांग आदि जितने भी नशे हैं उन में क्या कोई बुद्धि को बढ़ाता भी है ? यदि आप विचारेंगे और योरुप आदि विदेश के डाक्टरों और स्वदेशी वैद्यों तथा हकीमों की इस विषय में लिखित सम्मतियां देखेंगे तो आप को विदित होगा कि सब नशे न केवल बुद्धि का ह्रास हो करते हैं, किन्तु शरीर आदि का भी नाश कर डालते हैं ।

कसे खेद और शोक की बात है कि जिन लोगों का मद्य और मांस जातीय आहार समझा जाता था, वे तो उस का छोड़ते जाते हैं और ऋषि सन्तान उन का ग्रहण करते जाते हैं, और फिर होली जैसे पवित्र पर्वों और उत्सवों क्रो उन के प्रयोग से कलंकित और दूषित कर रहे हैं । क्या हमारी होली का राक्षसीय लीीलाओं को देखकर कोई भी विश्वास कर सकता है कि हम उन्ही ऋषियों की सन्तान है । जिन की विद्वत्ता, शूर-वीरता, धर्मपरायणता का लोहा संसार मान रहा है । आज कल होली के अवसर पर ग्रामों में जो नवाब बनाकर निकाला जाता है क्या इस से बढ़कर भी कोई अमांगल्य और अभद्र दृश्य हो सता है ? हमारे धर्मपरायण राम, कृष्ण, भीष्म, द्रोण, युधिष्ठिर आदि पूर्व पुरुषों की आत्माएं हमारे इन दुश्चरित्रों को देखकर क्या कहती होंगी ?

यह तो कुपढ़ों और निपट गंवारों अथवा अर्द्ध शिक्षितों की लीलाएं हुई । शिक्षित और सभ्यम्मन्यु भी हिन्दुत्व और हिन्दू त्यौहारों की रक्षा की दुहाई देते हुए होली में वे हुल्लड़ मचाते हैं कि जिन को देखकर लज्जा को भी लज्जा आती है । वे अपने इष्ट मित्रों साथी संगियों के वर वस्त्रों को लाल रंग से लतपत करते उन के मुंह पर गुलाल लपेट कर तथा आंखों में अवीर झौंककर उन की वह दुर्गत बनाते हैं कि उस को देखकर दया आती है । अब यह हुड़दंगापन नवीन सभ्यता के प्रचार से कुछ कम हो चला है, किन्तु दस बीस वर्ष पूर्व तो हिन्दुयों के तीर्थ-स्थान-मथुरा, काशी, हरिद्वार आदि नगरों में तो किसी भले-मानस पथिक को अपने बहुमूल्य श्वेत वस्त्र लाल रंग से अछूते लेकर निकलना असम्भव था ।

इस आधुनिक रंग बखेरने और गुलाल उड़ाने की कुप्रथा का मूल प्राचोन काल में यह प्रतीत होता है कि पुराने भारतवासी इस आमोद प्रमोद के पर्व पर कुसुमसार (इत्र) आदि सुगन्धित द्रव्यों को परस्पर उपहार रूप से व्यवहार में लाते थे । सम्भव है कि सम्मिलित मित्रमण्डली पर गुलाबपाश वा पिचकारियों द्वारा गुलाब जल छिड़का जाता हो और यतः इस वसन्त ऋतु के अवसर पर सब बसन्ती बाना वा पीताम्बर धारण किये होते थे, इसलिए अनुमान होती है कि केशर धुले हुए गुलाब जल का छिड़काव होता ही । उस से पीतवस्त्रों के बिगड़ने की कुछ आशंका न होती होगी । आजकल के विकृत विदेशी लाल रंग का यही मौलिक शुद्ध स्वरूप अनुमान होता है । गुलाल का मूल भी पुष्प का पराग वा पुष्पों की पत्तियों का चूणा होगा, जो पटवासक के रूप में काम में लाया जाता होगा । यही बिगड़ कर आजकल लाल पुड़िया से चावलों के चूर्ण (आटे) के रूप में गुलाल बन गया है और आंखों को अंधा करने और मानवमुखों की लाल वानरमुखाकृति कर देने के अतिरिक्त उस का कुछ भी उपयोग नहीं है । ये सारी अमर्यादित रंगरेलियां भारतीयों के उस विलासिता और कामक्रीड़ा के युग में प्रचलित हुई थीं, जब कि लक्ष्मी के लालों को इन्द्रियारामता और विषयवासना की तृप्ति के अतिरिक्त और कुछ न सूझता था । इस

....शेष ९ पेज पर

## आर्य समाज के गौरवमय पुत्र एवं केन्द्रीय मंत्री सत्यपाल सिंह की घोषणा

# स्कूलों में नहीं पढ़ाना चाहिए डार्विन का गलत सिद्धांत

# पूर्वजों ने बंदर को इंसान बनते नही देखा

डार्विन के बिकासवाद के सिद्धांत ने सारी दुनिया में हलचल मचा दी। डार्विन की मान्यता थी कि मानव प्रारंभिक अवस्था में बंदर था और प्रकृति के अवरोध एवं प्रकृति के अवरोध एवं प्रकृतिजन्य कठिनाइयों के कारण विकास करते-करते मानव मन गया। सामान्य दृष्टि से यह सिद्धांत ठीक लगता है कि हरेक वस्तु का विकास होता है और विकास के बाद स्वरूप बदल जाता है। स्थूल दृष्टि से विचार करने पर पश्चिम के विचारक इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि सृष्टि की प्रारंभिक अवस्था में मानव जंगली था। भूल और सुधार की प्रक्रिया से गुजरते हुए वह लाखों वर्षों में मनुष्य बन पाया। इस सिद्धांत की सभी धर्मों ने आलोचना की और यह प्रतिपादित किया कि डार्विन का यह सिद्धांत मूर्खतापूर्ण है। डार्विन ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि ह्रास से विकास का क्रम प्रारंभ होता है। पर भारतीय दर्शन की मान्यता इसके पूर्णतः विपरीत है। भारतीय दर्शन एवं वैदिक दर्शन के अनुसार मानव जाति विकास से ह्रास की और जा रही है। वैदिक दर्शन के अनुसार मानव जाति का विकास सतयुग, त्रेतायुग, द्वापर युग एवं कलयुग के अनुसार हुआ। सतयुग में देवत्व था। आसुरी वृत्तियों का अस्तित्व नहीं था। सारे संसार में मानवता थी। कहीं संघर्ष नहीं था। त्रैतायुग में असुरों का प्रार्दुभाव हुआ और देवत्व तथा आसुरी शक्तियों के बीच में संघर्ष हुआ। राम द्वारा रावण की पराजय और लंका दहन देवासुर संग्राम का प्रतीक है। द्वापर में आसुरी वृत्तियों का वर्चस्व इतना बढ़ गया कि देवताओं और असुरों के युद्ध में मानव जाति का विनाश हुआ। भाई-भाई से लड़ने लगा। मर्यादाएं टूटने लगीं। भरी सभा में द्रौपदी का चीरहरण किया गया।

कलयुग में पाप की पराकाष्ठा के कारण मानवता जुल्म की चक्की में पिसने लगी और सारी धरती इंसानियत के खून से लाल हो गई। प्रथम विश्व युद्ध हुआ फिर द्वितीय विश्व युद्ध हुआ और इस प्रकार मानवता कराहती रही। आज भी संघर्ष है, अकथनीय अत्याचार है, गरीबी है, सांप्रदायिकता है, शोषण है, अमानवीयता है, छोटी-छोटी बच्चियों के सांथ बलात्कार है, भ्रष्टाचार है। आर्थिक विषमता इतनी अर्थिक विषमता इतनी अधिक है कि ७३ व्यक्तियों की आय एक व्यक्ति के पास है। दिन ब दिन गरीब गरीब होता जा रहा है और अमीर अमीर होता जा रहा है। लोकतंत्र के परदे के पीछे लोक की हत्या हो रही है। जनता के विलाप, क्रंदन और सिकियों को सुनने वाला कोई नहीं है। महर्षि दयानन्द और इनके अनुयायियों ने विकासवाद के सिद्धांत का प्रबल विरोध किया और घोषणा की कि सृष्टि के आदिकाल में सारे विश्व में ऋषि-मुनियों का शांति का संदेश था। त्रेतायुग और द्वापर में राम, हनुमान, कृष्ण, पाणिनी, पंतजलि, कपिल, गौतम आदि महान पुरुष हुए।

केन्द्रीय मानव संसाधन विकास राज्यमंत्री सत्यपाल ने डार्विन की आलोचना करके महर्षि दयानन्द को श्रद्धांजलि दी है। सत्यपाल की इस घोषणा के बाद पश्चिम के गुलाम भारतीयों को कितना दर्द हुआ कि वे सत्यपाल सिंह के विरुद्ध शोर मचाने लगे। इससे यह सिद्ध हो गया कि आज भी देश में काले अंग्रेजों का चर्चस्व है जो भारत की अस्मिता को समाप्त करने के लिए अनैतिहसिक ग्रंथ लिखा करते थे और भारतवर्ष की वैदिक संस्कृति को अनपढ़, अशिक्षित और गड़रियों की संस्कृति कहते थे। ये काले अंग्रेज पश्चिम के विद्वानों को ही विद्वान मानते हैं और उनके हरेक अक्षर को ब्रह्मवाक्य। इन काले अंग्रेजों के अनुसार भाजपा शासनकाल में नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में देश के इतिहास को बदला जा रहा है और पौराणिक गप्पों के आधार पर इतिहास को विकृत किया जा रहा है। सत्यपाल सिंह ने डार्विन के सिद्धांत की चर्चा छेड़ कर यह सिद्ध कर दिया है कि अब भी अंग्रेजों के गुलाम भारतवर्ष में वैदिक संस्कृति की छवि को विकृत करने के लिए कटिबद्ध हैं। डार्विन का यह सिद्धांत वैदिक संस्कृति का शत्रु है। इसीलिए महर्षि दयानन्द के अनुयायियों ने डार्विन के सिद्धांत पर प्रबल आक्रमण किया जिसका उत्तर पश्चिम पर प्रबल आक्रमण किया जिसका उत्तर पश्चिम नहीं दे सका। इस संदर्भ में आर्य समाज के प्रकांड विद्वान विद्या मार्त्तण्ड पं. बुद्धदेव जी विद्यालंकार (स्वामी समर्पणानन्द) का विकासवाद पर निम्नलिखित लेख को पुनः प्रसारित करने की अवश्यकता है।

ऋषि दयानन्द अपने समय में अपने ढंग के अकेले थे। अकेले बिल्कुल अकेले थे, सौ में अकेले, हजार में अकेले, लाख में अकेले, करोड़ में अकेले, दुनिया के दो अरब मनुष्यों में अकेले। बस, साथी था तो वह भगवान था जिसने उन्हें सारे विश्व से निराले होकर वेद के सच्चे अर्थ समझाने की सामर्थ्य दी।

उन्हें किस-किस का सामना करना पड़ा ?

भारत में अन्ध-विश्वास तो थे ही, किंतु वेद के अर्थ को विपरीत करने में उनके सामने जो सबसे बड़ा अन्धविश्वास खड़ा था, वह विकासवाद का अन्धविश्वास था। इस घोर अन्धविश्वास को पश्चिमीय विज्ञान तथा पश्चिम की कुटिल राजनीति दोनों का समर्थन प्राप्त था। पश्चिमी विकासवादी

कहते थे, 'प्राचीना आर्या मूर्खाः, प्राचीनत्वात्, अस्मदीय-प्राचीन-पुरुषवत् ।' इस हेत्वाभास भरे अनुमान को देखकर हँसी भी आती थी और रोना भी। हँशी इसलिये आती थी मांनों कोई किसी सती को कह रहा हो 'सति पत्यौ त्वं विथवा, स्त्रीत्वात्, प्रतिवेशिनीवत्' ।

वेद में कितनी ही बुद्धिमत्तापूर्ण बात लिखी हो, किन्तु उसका अर्थ उलटा ही होना चाहिये, नहीं तो समझ लो कि वेद का पाठ विकृत हो गया है। वेद में बुद्धि-पूर्वक बात हो ही नहीं सकती, क्योंकि मानव के वैदिक पूर्वज हमारी अपेक्षा बन्दर के अधिक समीप थे। यदि आप इस विकासवाद के अन्धविश्वास का खेल देखना चाहें तो अथर्ववेद के इस मंत्र का सायण तथा ग्रिफिथ का अनुवाद देख लीजिये-

**मुग्धा देवा उत शुनाऽयजन्त उत गोरंगैः पुरुधाऽयजन्त ।**

**य इमं यज्ञं मनसा चिकेत प्रणो बोचस्तमिहेह ब्रवः ॥**

मंत्र का यह भाष्य ते सायण का है, इस पर ग्रिफिथ का अनुवाद और टिप्पणी देखिये-

With dog the Gods, perplexed, have paid oblation, and with cow's limbs in sundry sacrifices, Invoke for us, in many a place declare him who with his mind hath noticed this our worship.

देवों ने परेशान होकर कुत्ते की भेंट अर्पित की और गऊ के अंगों के साथ छोटी भेंटें दीं। अनेक स्थानों पर उसको हमारे लिए जगाओ जिसने हमारी इस भेंट-पूजा को देखा है।

With dog : no legend refering to this extraordinary sacrifice has survived. Perplexed : it seems impossible that mugdh's (perplexed, infatuated) can be the right reading here. A substantive in the instrumental case is required by the context. M. Victor henry reads murdhna, with the head, that is, with the horse's head given to Dadhyach, which, according to M. Beraigne (Religion, Vedique, 11 page 458) symbolized Agni or soma.

इस प्रकार कुत्ते की यज्ञ-भेंट करने वाली कोई दन्त-कथा हमें उपलब्ध नहीं होती। इस मंत्र से 'मुग्धा' का पाठ असंभव प्रतीत होता है। प्रकरणानुसार यहाँ तृतीया विभक्ति होनी उचित प्रतीत होती है, इसलिये यहाँ 'मुग्धाः' के स्थान पर 'मूर्ध्ना' घोड़े का सिर दधीचि को भेंट में दिया जाना सम्भव हो सकता है। श्री मौशियर बर्गेन पृ. ४५८ जो कि अग्नि और सोम हो सकता है।

यह देखिये, विकाराबाद की करामात, क्योंकि ग्रिफिथ साहिब की विचारधारा से यह मंत्र मेल नहीं खाता, इसलिये मंत्र ही बदल डालना चाहिये।

सुनते हैं कि गवर्राण्ड के राज्य में एक मनुष्य को फाँसी हुई। फाँसी का फंदा उसके गले में पूरा नहीं आया। हुक्म हुआ कि जिसके गले में पूरा उतरे उसी को फांसी पर टांग दो। यही हाल यहां है। हमारे विकाराबाद का फंदा इस मंत्र के गले में पूरा नहीं उतरा समझ लो। यह है विकासबाद का अंधविश्वास।

इस बात का आज के युग में इतना आतङ्क है कि इसके विरुद्ध कुछ बोलना उपहास को नियंत्रण देना है, परंतु हमारी समझ में नहीं आता कि इसमें जान क्या है ?

विकासवाद का मूलाधार है प्राणायात्रा-जन्य परिवर्तन, प्राण की रक्षा के लिए जिसे नंगे पाँव चलना पड़े उसके पैरा का चमड़ा धीरे-धीरे मोटा तथा शीतोषणादि-द्वन्द्व-सहन-समर्थ हो जाता है। जिसे नंगे पैर न चलना पड़े उसका चमड़ा नरम पड़ता जाता है परंतु यह नियम एक सीमा तक ही चलता है।

सींग, पूँछ, पंख आदि जो अंग मनुष्य के पास नहीं है, उन सब की उसे आवश्यकता है। यदि न होती तो नाना प्रकार के शस्त्र, नाना प्रकार के नौका-विमानादि तथा चामर और बिजली के पंखे आदि वह क्यों बनाता ? परंतु आज तक उसके ये अंग क्यों प्रकट नहीं हुए ? जो जातियाँ सहस्त्रों वर्षों से नदी के किनारे रहती हैं और केवल मछली मारकर जीवन-निर्वाह करती हैं, उनका सद्यो-जात शिशु तैरना क्यों नहीं जानता ? क्या करोड़ों वैज्ञानिक अंधविश्वास-वश हम पर रौब डालने के लिए हाथ उठाकर चिंघाड़-चिंघाड़कर कहेंगे कि उन्हें तैरने की आवश्यकता नही रही, इसलिये वे तैरना भूल गये ? तो भी इस बात पर अंध श्रद्धा के सिवास किसी दूसरे पर विश्वास किया जा सकता है ? कदापि नहीं।

दूसरी ओर जो भैंस सहस्त्रों वर्ष से राजपूताने में रहती है, जिसे कभी डूबने योग्य पानी में तैरने का अवसर वर्षों में एक-आध बार आता होगा, उसको सद्यो-जात शिशु पानी में घुसते ही क्यों दैरने लगता है ?

मानव-जगत् तथा मानवेतर जगत् का यह पर्वताकार भेद आँखों से कैसे परे किया जा सकता है ? इसे आँखों से परे करने का एक ही उपाय है। विकासवादियों के भय के मारे आँखों बंद कर लें। बस, फिर तो अंधकार के सिवाय कुछ नहीं। परंतु जब तक मस्तिष्क में तर्क की एक चिनगारी भी रोष है, कोई आँखें कैसे मूंद ले ?

अब लीजिये कछु को, यह विचित्र जन्त है ! इसे जरा उलट दीजिये, बस फिर एक पग भी नही चल सकता। इसलिये यदि कोई मोटर कार उलट जाये तो अंग्रेजी में कहा जाता है- The car has turned turtle. परन्तु इससे भी विचित्र बात यह है कि इस जन्तु की पीठ पत्थर से भी अधिक कठोर है। दूसरी ओर इसका पेट अति सुकुमार है। हम पूछना चाहते हैं कि इस जानवर पीठ कब और कहाँ रगड़े खा-खाकर कितने करोड़ वर्ष में कठोर होगा ? अब यह पीठ के बल चलना एकदम क्यों भूल गया वह करोड़ों वर्षों की आदत एक-दम कहाँ रफूचक्कर हो गई ? इसके पेट की सुकुमारता को देखकर तो कहा जा सकता है कि इसे पैरों के बल चलते मुश्किल से कुछ हजार वर्ष हुए होंगे, वह करोड़ों वर्षों की पीठ के बल चलने की आदत कुछ

..पृष्ठ ६का शेष

हजार वर्ष में कहाँ भाग गई ? और इसके पैर तो अभी तक पत्थर के समान कठोर नहीं हुए ?

अब एक और जीव-श्रेणी लीजिये । इनमें से मैं मोर और कोयल को लेता हूँ । प्राण-रक्षा के निमित परिश्रम करने से मोर के पंजे तीक्ष्ण हो गये हों, डैने बलवान् हो गये हों, चोंच कठोर हो गई हो, यह सब-कुछ तो समझ में आता है, परंतु यह सुन्दर पूँछ के चन्दे कहाँ से आ गये । मोर के कण्ठ तथा पूँछ की सुंदरता और कोयल के कण्ठ को काकली का जन्म कैसे हुआ ? इस लम्बी सुंदर पूँछ का सौन्दर्य कहाँ से आया और नृत्य-कला मोर ने कहाँ से सीखी ? उत्तर मिलता है कि सौंदर्य पर ही मोहित होकर मोरनी मोर की ओर आकृष्ट होती है, इसलिये यह उसकी प्राम-रक्षा के लिए आवश्यक है । वाह जी वाह ! यह भी एक रही ! पहिले सुंदर पूँछ बनी, तब मोरनी आकृष्ट हुई, परंतु प्रश्न तो यह है कि सुंदर पूँछ बनी कैसें ? चेतनाहीन प्रकृति में इस सुंदर कलाकृति का विकास कैसे हुआ ? उत्तर एक ही हो सकता है, तर्क की आँख मूँद लो और विकासवादी महामहोपाध्याय जी के आगे हाथ जोड़कर कह दो- 'सत्य वचन महाराज' नहीं तो आर्य समाजी कहकर तुम पर धरती से मिटा दिये जाने का फतवा लगादिया जायेगा, परंतु हम तो टलने वाले नहीं ।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मानव तथा मानवेतर जगत् मे एक स्पष्ट भेद है ।

मानव बिना सिखाए कुछ नहीं सीखता ।

मानवेतर को जन्म से बहुत सी सिद्धियाँ प्राप्त हैं जिन्हें सीखने में मानव को सैकड़ों वर्ष लग जाते हैं । कबूतर को उड़ने की सिद्धि, भैंस को तैरने की सिद्धि, रेशम के कीड़े को रेशम बनाने की तथा मधुमक्षिका को मधु तथा मधुकोष बनाने की सिद्धि- ये सिद्धियाँ इन जीवों को जन्म से प्राप्त हैं, इसलिये यह पशु अर्थात् द्रष्टा कहलाते हैं ।

दूसरी ओर मनुष्य मनु अर्थात् मननशील कहलाता है । मनुष्य में जो उपत्य प्रत्यय है, यह आलङ्कारिक है अर्थात् मनन की संतान, अन्यथा मनुष्य तथा मनु पयायवाची हैं, जैसा कि ऐतरेय ब्राह्मण के इस प्रमाण से सिद्ध है-

**होता मनुवृतोऽयं हि सर्वतो मनुष्यैर्वृतः**

हमने देख लिया कि यह विकासवास एक योथी, सरहीन, निराधार, तर्क-विरुद्ध, जर्जर कल्पना मात्र है, किन्तु यही आज एक दीवार बनकर हमारे और सच्चे वेदार्थ के बीच खड़ी है । इस दीवार को तोड़ दो

## *वैज्ञानिकोंने कहा० मंत्री सत्यपाल के दावे का वैज्ञानिक आधार नहीं*

भारतीय वैज्ञानिकों ने मंत्री के बयान को बिना किसी वैज्ञानिक आधार के दिया गया बयान करार दिया है । बेंगलुरू के सेंटर फॉर इकोलॉजिकल साइंसेस, इंडियन इस्टीट्यूट ऑफ साइंस के प्रोफेसर राघवेंद्र गडगकर ने कहा कि सभी वैज्ञानिक साक्ष्यों से तो यही साबित होता है कि इंसानों की उत्पत्ति ५० लाख वर्ष पूर्व बंदरों से हुई । ऐसे में यह सवाल कैसे उठाया जा सकता है कि हमारे पूर्वजों ने बंदर से इंसान बनते नहीं देखा और न ही उन्होंने कुछ लिखा । जवाहरलाल नेहरू सेंटर फॉर एडवांस्ड साइंटिफिक रिसर्च के प्रोफेसर अमिताभ जोशी ने भी मंत्री सत्यपाल सिंह की बात को गलत बताया । वहीं ३ हजार लोगों के हस्ताक्षर के साथ सिंह को एक चिट्ठी ऑनलाइन भेजकर उनके बयान को क्रमिक विकास के सिद्धांत को लेकर भ्रमित करने वाला कहा गया है ।

सम्मेलन बुलाया जाए,
जिसमें बंदर से इंसान
बनने के सिद्धांत पर चर्चा हो

मानव संसाधन विकास राज्य मंत्री सत्यपाल सिंह बंदरों से इंसान की उत्पत्ति से संबंधित वैज्ञानिक चालर्स डार्विन के सिद्धांत को गलत बताने के बयान पर कायम हैं । उन्होंने कहा, 'मैं अपनी टिप्पणी पर पूरी तरह से कायम हूं ।'

उन्होंने कहा कि अंतरराष्ट्रीय स्तर का एक सम्मेलन बुलाया जा सकता है, जिसमें बंदर से इंसान बनने के सिद्धांत पर चर्चा की जाए । इसके नतीजों के आधार पर भारतीय पाठ्यक्रम से इसे हटाया जा सकता है । सिंह आईआईटी गुवाहाटी में एक बैठक में हिस्सा लेने पहुंचे थे ।

यह आश्चर्य की बात है कि भाजपा के नेता भी विकासवाद के भक्तों के आगे हाथ

काम-केलि के काल में ही वसन्त और होलिका के पवित्र प्रमोदपूर्ण ऋतूत्सव मदनोत्सव के रूप में परिणात हुए थे । जिन का विस्तृत वर्णन कविकुलगुरु कालिदास के "अभिज्ञान शाकुन्तल" और "मालविकाग्निमित्र" तथा श्रीहर्ष की "रत्नावली" में विद्यमान है । श्री कृष्ण-चरित्र को कलंकित करने वाले ब्रजमण्डल की उच्छृङ्खल होली का सूत्रपात भी इसी कामकौतुकप्रियता के कलुषित काल में हुआ था, जो भारत के आशावलम्बन सैकड़ों युवा-युवतियों को पापपंक में निमग्न करके उन के सर्वनाश का हेतु होती है । होलिकोत्सव कीी इन्हीं पाशविक-वृत्तियों वा अविद्यादानवी के विलासों के वश वह विद्याशून्य शूद्रों का पर्व कहलाता था वा सम्भव है कि आमोद-प्रमोद की अपेक्षाकृत मन की नीचवृत्तियों के विकास के कारण ही वह आर्यपर्वावलो में चातुर्वण्यं में अवरिष्ठ सणजे जाने वाले शूद्र का स्थानी शूद्र पर्व माना जाता हो ।

प्राचीनकाल में होलिकोत्सव के आनन्दावसर पर शिक्षाप्रद अभिनयों के खेलने की भी रीति प्रचलित थी । भारत में दृश्यकाव्य वा अभिनयकला का प्रचार स्मरणातीत समय से चला आता है और उस ने संस्कृत साहित्य के मध्यकालीन अभ्युदय काल में बहुत उन्नति की थी । यह कला मनोरंजन के साथ-साथ शिक्षा-प्रदान का अमोघ साधन है, किन्तु भारत के अविद्यान्धकार के प्रसार के साथ-साथ उस कला की भी अवनति होती गई और वह इस समय केवल पाशविक वृत्तियों की उत्तेजना का साधन रह गई । आजकल होली के अवसर पर भद्दे स्वांग निकाले जाते हैं, वे इन्हीं अभिनयों के विकृत रूप हैं । यदि उन को सुधार कर शुद्ध स्वरूप में पुनः प्रचलित किया जाये तो उन से जनसाधारणा में उत्तम आदर्श के साथ-साथ सुरुचि और सुभा,I-प्रसार का अच्छा काम लिया जा सकता है । बङ्गप्रदेश में परिमार्जित बङ्गभाषा का प्रचार वहां सुललित पदों में अभिनीत नाटकों और यात्राओं द्वारा ही हुआ था । परम्परागत पुरानी उपादेय प्रथाओं वा संस्थाओं का लोप न करके उन को परिष्कृत रूप में प्रचलित करने से जनता का प्रचुर उपकार हो सकता है । सर्वसुधारों

..शेष १३ पेज पर

# భర్గః

ఈ 'భర్గః' పదం తదుపర పదంలో సంధి ఏర్పడటం వల్ల గాయత్రీమంత్రంలో 'భర్గో'గా మారింది. 'భ్రస్జ - పాకే' 'భృజీ - భర్జనే' అను ధాతువులతో 'భర్గః' పదం ఏర్పడుతుంది. పాపరహితుడు, పాపనాశకుడునని ఈ పదమున కర్థం. **'భృజ్ఞతి పాపాని దుఃఖమూలాని యః సః- భర్గ'** అని నిర్వచనం. పాపాలను, అవిద్యాది క్లేశాలను భస్మంచేస్తాడు కనుక పరమేశ్వరునకు భర్గుడని పేరు.

మనం చేసే కర్మలు ధర్మయుక్తము, న్యాయయుక్తము అయితే పుణ్యకర్మలౌతాయి. అవే కర్మలు అధర్మయుక్తము అన్యాయ యుక్తము లయితే పాపకర్మలౌతాయి. పరమేశ్వరుడు మనం చేసే కర్మలకు న్యాయమూర్తివలె (జడ్జీవలె) న్యాయంగా ఫలాలనిస్తాడు. కనుక, అతడు న్యాయకారి-న్యాయమూర్తి. ఈ లోకపు న్యాయమూర్తులు అల్పజ్ఞతవల్లకాని, ప్రలోభవశులైకాని సరియైన న్యాయం చెప్పలేకపోవచ్చును. కాని, పరమేశ్వరుడు సర్వజ్ఞుడు, సర్వవ్యాపకుడు, సర్వసాక్షి, పక్షపాతరహితుడు కావటంవల్ల అతని న్యాయం సున్నితపుత్రాసుతో తూచినంత సరిగా ఉంటుంది. అతడు పరిపూర్ణుడు కావటంవల్ల ప్రలోభాలకు వశమయ్యే ప్రసక్తేలేదు. జీవులనుభవించే సుఖదుఖాలకు వారుచేసిన కర్మలే కారణంకాని పరమేశ్వరుని ఆగ్రహానుగ్రహాలు కావు. అందుచే అతడు పాపరహితుడు. ఎవరు అతనిని ధర్మదేవతగా ఉపాసిస్తారో వారిని అతడు రక్షిస్తాడు. పాపకార్యాలు చేయబోయేముందు వారిలో భయాందోళనలు కలిగించి వారిని పాపకార్యలనుండి నివృత్తుల చేస్తాడు. ఆ విధంగా ఆయన పాపనాశకుడు.

ఆది శంకరాచార్యులవారు గాయత్రీ మంత్రానికి భాష్యం వ్రాస్తూ 'భర్గః' పదమునకు ఈ విధ్గా అర్థం వ్రాశారు. **- "భర్గః = అవిద్యా తత్కార్యయోః భర్జనాత్ భర్గః, స్వయం జ్యోతిః, పరబ్రహ్మాత్మక తేజః"** - అంటే అవిద్యను, తత్కారణంగా ఏర్పడిన సమస్త క్లేశాలను భస్మంచేస్తాడు కనుక పరమేశ్వరునకు భర్గుడని పేరు. అతడు స్వయం ప్రకాశకుడు. పరబ్రహ్మాత్మక దివ్యతేజము.

అవిద్యవల్ల అస్మితా రాగ ద్వేష అభినివేశా లనే క్లేశాలొస్తాయి. ఇవన్నీ కలిసి పంచక్లేశాలు. ఈ పంచక్లేశాలను. భర్గఃతేజం దహించి వేస్తుంది. అవిద్య అంటే దేహాత్మభ్రాంతి. జీవుడు తన స్వరూపాన్ని మరచి దేహమే తానను కుంటాడు. దానితో ఈ శరీరాన్నీ, ప్రపంచ పదార్థాలనీ నిత్య పుట్టిన మనుకుంటాడు. మలమూత్రయుక్తమైన శరీరాలను శుచిగా భావిస్తాడు. క్షణికములైన విషయ సుఖాలను నిత్యసుఖా లనుకుంటాడు. పతంజలి మహర్షి తన యోగదర్శనంలో ఈ విషయాన్ని **'అనిత్యాశుచి దుఃఖానాత్మసు - నిత్యశుచి సుఖాత్మ ఖ్యాతి రవిద్యా** (2-5) అని సూత్రీకరించాడు. దీనినే ఉపనిషత్కారులు 'హృదయగ్రంథి' అన్నారు.

'దృగ్దర్శనశక్త్యో రేకాత్మతే వాస్మితా (యో.ద.2-6)" **జీవుడు బుద్ధితో ఏకరూపత చెందటాన్ని-తాదాత్మ్యం చెందటాన్ని అస్మిత అంటారు. దేహానికీ, మనస్సుకు కలుగుతున్న సుఖదుఃఖానుభవాలను బుద్ధి గ్రహించి జీవునకు తెలుపుతుంది. కాని, జీవుడు అవి తనకే కలుగుతున్నట్లు భావించి వ్యథచెందుతాడు. ఇది అస్మితా క్లేశంవల్ల కలుగుతుంది.**

**"సుఖానుశయీ రాగః** (యో.ద.2-7)" మనం ఏదైనా సుఖం అనుభవించినపుడు దానియొక్క సంస్కారం - స్మృతి-జ్ఞాపకం మన మనసులో చేరుతుంది. దానితో ఆ సుఖం మరలమరల అనుభవించాలనే కోరిక కలుగుతుంది. దానినే రాగం అంటారు. ఆ రాగంవల్లనూ మనకు క్లేశం (బాధ) కలుగుతుంది.

"దుఃఖానుశయీ ద్వేషః- (యో.ద.2-8)" - మనకు ఏదైనా బాధ-కష్టం కలిగినపుడు దాని సంస్కారం మనసులోచేరి, అది గుర్తుకు వచ్చినపుడు దానిపై వ్యతిరేకభావం (క్రోధం) కలుగుతుంది. మన సుఖాలకు అడ్డువచ్చే వారిపైనా, మనపట్ల వ్యతిరేకభావం కలవారిపైనా, మనకు నచ్చనివారిపైనా కూడా క్రోధం-ద్వేషం కలుగుతూ ఉంటాయి. ఇవి మనకు అశాంతిని - క్లేశాన్ని కలిగిస్తాయి.

పై నాలుగు క్లేశాలేకాక మృత్యుభయమునూ ఒక క్లేశంగా మనను బాధిస్తుంది. ఈ జన్మలో మనకు ఇంకా అట్టి బాధ కలుగకపోయినా పూర్వజన్మలలో పొందిన అనుభవం బలంగా మన మనస్సులో ముద్రపడిఉంది. అందువల్ల మృత్యువనే మాట వింటేనే మనకు భయం కలుగుతూ ఉంటుంది. విచిత్రంగా ఈ భయం సామాన్య మానవులందేగాక ఆత్మజ్ఞానంగల విద్వాంసులలోనూ కనబడుతుంది. ఈ విషయాన్నే పతంజలి మహర్షి-**"స్వరసవాహీ విదుషోఽపి తథారూఢోఽభినివేశః"** (యో.ద. 2-9) అని సూత్రీకరించాడు. అభినివేశ మంటే మరణభయం.

పుట్టిన ప్రతీ మనిషీ పై పంచక్లేశాలతో పీడింపబడుతూనే ఉన్నాడు. ధనవంతుడైనా ధనహీనుడైనా,బలవంతుడైనా బలహీనుడైనా, విద్వాంసుడైనా విద్యాహీనుడైనా ఎంతోకొంత అందరూ పై క్లేశాలతో బాధపడుతూనే ఉన్నారు. వీటినుండి బయట పడటానికి ఏకైక మార్గం భర్గోదేవుని ఉపాసన. అతడే క్లేశరహితుడైన శుద్ధస్వరూపుడుకనుక మనను వీటినుండి తరింపచేయగలడు. ఆదిశంకరా చార్యులవారి అభిప్రాయమూ యిదే.

'భర్గః' పదమునకు విశుద్ధమైన ప్రకాశమని మరియొక అర్థం. కోట్లాది సూర్యుల ప్రకాశమును ఆ ప్రకాశానికి సరిరాదు. మన ఆత్మయును ప్రకాశం గలదేకాని పరమేశ్వరునంత ప్రకాశ వంతమైనదికాదు. అదియును కామక్రోధాది

మాలిన్యాలతో ఆవరింపబడి ఉండటంవల్ల అల్పంగానే ప్రకాశిస్తున్నది. దానిని మనం పరంజ్యోతియైన భర్గోదేవుని ప్రకాశంతో శుద్ధపరచుకోవలసి ఉంది. బంగారం మూసలో కరిగి తన మాలిన్యాలను పోగొట్టుకుని ప్రకాశించునట్లు మనం మన ఆత్మను పరమాత్మ ప్రకాశంతో శుద్ధపరచుకోవాలి. మహర్షి దయానంద సరస్వతిగారు తమ యజుర్వేద భాష్యంలో 'భర్గః' పదమునకు ఈ విధంగా అర్థాలు వ్రాశారు.

1. **సర్వదోష ప్రదాహకం తేజోమయం శుద్ధమ్ (యజు. 22-9)**
2. **భృజ్జన్తి దుఃఖాని యస్మాత్ తత్ (యజు. 30-2)**
3. **సర్వదుఃఖ ప్రణాశకం తేజః స్వరూపమ్ (యజు. 36-3)**

ఇట్లే మన ఋషులు మహర్షులు భర్గడంటే విశుద్ధ తేజఃస్వరూపమని వివరించారు.

'భర్గః' పదమునకు విశుద్ధ జ్ఞానమని మరియొక అర్థం. పరమేశ్వరుడు సర్వజ్ఞుడు. జీవులమైన మనం అల్పజ్ఞులం. ఇంతేగాక, మన జ్ఞానం భ్రమ ప్రమాదాలతో కూడి యుంటుంది. అట్టి మన జ్ఞానాన్ని విశుద్ధపరచుకొని వికసింపచేసుకోవటానికి భర్గోదేవుని ఉపాసించవలసి ఉంది. అతని నుపాసించటంవల్ల అగ్నిసమీపంలో చలి దూరమైనట్లు మన అవిద్యా అజ్ఞానాలు తొలగిపోయి జ్ఞానవికాసం కలుగుతుంది.

మనం వసించే ఈ ప్రపంచంలో అనేక విషయసుఖాలున్నాయి. మన కోరికలు ఇంద్రియసుఖాలవెంట పరులుగు తీస్తున్నాయి. లోకంలో వాటిని పొందటానికి వెలుగుమార్గాలే కాక అనేక చీకటి దారులునూఉన్నాయి. వెలుగు మార్గాలకన్న చీకటి దారులే తేలికనవిపిస్తున్నాయి. ఫలితంగా మానవుడు తప్పు మార్గాన్నను సరించి అంధకారంలోనికి పోతున్నాడు. అనేక పాపాలు చేసి కాలాంతరంలో అనేక కష్టాల ననుభవిస్తున్నాడు. అప్పటికికాని అతనికి పశ్చాత్తాపం కలగటం లేదు. అనేక జీవితాను భవాల ననుభవించినా ముందుగానే మార్గమేదో నిర్ణయించుకోలేక వివశుడైపోతున్నాడు. అప్పుడే మానవునకు భర్గోదేవుని ప్రకాశ మవసర మౌతుంది. ఆ విశుద్ధ ప్రకాశంలో అజ్ఞానపు తెరలు తొలగిపోయి సరియైన మార్గ మేదో గోచరిస్తుంది.

ఏ భక్తునకు భర్గోదేవుని ప్రకాశం లభిస్తుందో అతడు విశుద్ధమైన జీవితాన్ని గడుపుతాడు. అతని మనోవాక్కాయాలు పాపరహితము లౌతాయి. తద్వారా అతనికి అన్నీ సుఖాలే ప్రాప్తిస్తాయి.

నేడు లోకంలో భర్గః పదము పురాణోక్త కైలాసాధిపతియైన శివ నామముగా ప్రచారం పొందింది. కాని పరమేశ్వరుడు ఏకదేశవాసి కాడు. అతడు సర్వవ్యాపకుడనీ - సర్వత్రా సమానంగా వ్యాపించి యున్నాడనీ వేదం నొక్కివక్కాణిస్తుంది. "స పర్యగా చ్ఛుక్ర **మకాయ మవ్రణ మస్నావిరం శుద్ధ మపాప విద్ధమ్....** (యజుర్వేదం-40-8) అతడు సర్వవ్యాపకుడు, సర్వశక్తిమంతుడు. కాయరహితుడు- స్థూల సూక్ష్మ కారణ శరీరరహితుడు. వ్రణరహితుడు - ఎట్టి లోపములూ లేని పరిపూర్ణుడు. అస్నావిరం=స్నాయు (నాడీ) బంధరహితుడు. శుద్ధుడు. అపాపవిద్ధుడు - జీవులవలె పాపకర్మలు చేసి పాపబుద్ధుడు కాడు.

అట్టి విశుద్ధుడైన పరమేశ్వరునకే భర్గః పదం వర్తిస్తుందికానీ పురాణోక్త కైలాస లోకాధిపతికి కాదు.

**'భర్గః' సారాంశం**

న్యాయకారివైన ఓ పరమేశ్వరా! నీ సృష్టి స్థితి లయ పాలనాది కర్మలన్నీ న్యాయ పూర్ణములు. జీవులు చేయు కర్మలకును నీవు న్యాయముగానే ఫలముల నిత్తువు. కావున, నీవు పాపరహితుడవు. శుద్ధుడవు. నిన్నుపాసించి మేమును నీవంటి వారమే అగుదుము గాక। నీవు సర్వజ్ఞుడవు. విశుద్ధ జ్యోతివి. మా అవిద్యాది క్లేశముల నన్నిటిని దగ్ధంచేసి మమ్ము ధర్మమార్గాన నడుపుము.

**దేవస్య**

'దేవస్య' అంటే 'దివ్య గుణాలు గల దేవుని యొక్క' అని అర్థం. పూర్వోక్త వర్ణింపబడిన దివ్యగుణాలన్నీ ఎవనిలో ఉన్నాయో అట్టి దేవదేవుని ధ్యానింపుమని ఈ పదం చెబుతున్నది.

'దైవం' పదానికి వైదిక సాహిత్యంలో విస్తృతమైన అర్థాలున్నాయి. సామాన్యంగా పరోపకారంకొరకు పాటుపడేవారిని దేవతలనీ, తనకొరకే పాటుపడేవారిని మానవులనీ అనవచ్చు. పరోపకారం చేసేవారు కేవలం మానవులే కానక్కరలేదు. భూమి జలము అగ్ని వాయువు ఆకాశము సూర్యుడు చంద్రుడు నక్షత్రాలు మొదలైన జడపదార్థాలుకూడా మౌనంగానే పరోపకారం చేస్తున్నాయి. ప్రాణులహితం కొరకే అవి సృజింపబడ్డాయి. అందుచే వాటిని దేవతలన్నారు. ఇవి జడ దేవతలు. అంటే జ్ఞానంలేని దేవతలు.

చేతనులైన మానవులలో పరోపకారాది దివ్యగుణాలు గలవారందరినీ దేవతలనవచ్చు. విద్వాంసులు, వీరులు, దేశభక్తులు, సేవాతత్పరులు, లోక కళ్యాణంకొరకు పాటుపడే సాధుసన్యాసులు మొదలైనవారంతా దేవతలే. వ్యక్తిపరంగా ఆలోచిస్తే జన్మనిచ్చిన తల్లిదండ్రులు, విద్యా సదాచారాలను నేర్పిన ఆచార్యులు, ధర్మోపదేశం చేసే అతిథులు మొదటగా లెక్కింపదగిన దేవతలౌతారు. కనుకనే **"మాతృదేవో భవ, పితృదేవోభవ, ఆచార్యదేవో భవ, అతిథి దేవోభవ"** అంటారు మన శాస్త్రాలు.

సామాజికపరంగా-పక్షపాతం చూపకుండా సమాజ సంక్షేమంకొరకు కృషి చేసేవారందరినీ దేవతలనవచ్చును. దేశపరంగా - ధర్మాత్ముడైన రాజు, సదా దేశహితంకొరకు దేశఉన్నతికొరకు విద్యా విజ్ఞాన రంగాలలో పరిశ్రమించేవారంతా దేవతలు. విశ్వపరంగా-సర్వప్రాణి హితైషులైన ఋషులు మునులు యోగులు తపస్వులు దేవతలు. వీరిని విశ్వదేవత లనియును అంటారు. **'శం నో దేవా విశ్వదేవా భవన్తు** - (ఋగ్. క్ష636-10)' అని సంకల్పించ మంటుంది వేదం. అంటే- **'మా దేవతలు విశ్వదేవత లగుదురు గాక'** అని అర్థం. విశ్వదేవతలంటే విశ్వకళ్యాణం కొరకు కుల మత జాతి ప్రాంతాది భేదాలు లేకుండా మానవమాత్రులందరికి మేలు చేసేవారు.

దేవత లెవరు ? అనే ప్రశ్నకు యాస్కమహర్షి తన నిరుక్త శాస్త్రంలో **'దేవో**

**దానాద్వా, దీపనాద్వా, ద్యోతనాద్వా, ద్యుస్థానే భవతీతివా'** అని సమాధానమిచ్చారు. అంటే ఎవరు దానశీలురో, ప్రకాశిస్తారో, ప్రకాశింప చేస్తారో, ద్యుస్థానంలో (ఆకాశంలో) ఉంటారో వారందరూ దేవతలే నని భావం. ఈ గుణాలు జడపదార్థాలలో ఉంటే అవి జడదేవతలు, చేతసులలో ఉంటే చేతన దేవతలు.

అయితే, ప్రకరణాన్ననుసరించి (ప్రసంగాన్ని బట్టి) ఇచట ఈ గాయత్రీ మంత్రంలో దేవ పదము పరమేశ్వరునకు వర్తిస్తుంది. పరమేశ్వరుడు స్వయం ప్రకాశకుడు. అతని వల్లనే మిగతా దేవతలన్నీ ప్రకాశిస్తున్నాయి. భూలోక భువర్లోక స్వర్లోకాలలో ఉండే సమస్త జడదేవతలను సృజించిన వాడునూ పరమేశ్వరుడే. మనం తెలుసుకోవలసినది, ఉపాసించవలసినదికూడా అతడినే. వేదోపదేశ మేమంటే -

**ఋచో అక్షరే పరమే వ్యోమన్ యస్మిన్ దేవా అధి విశ్వే నిషేదుః।**

**యస్తన్న వేద కిమృచా కరిష్యతి య ఇత్తద్విదుస్త ఇమే సమాసతే** ॥(ఋ. 1-164-39)

ఎవనిలో ఋగ్వేదాది సమస్త వేదజ్ఞానము, సమస్త జడ చేతన దేవతలు స్థితములై ఉన్నాయో అతనిని తెలుసుకొని ఉపాసించక కేవలం వేదపాఠం వల్లించటం వల్ల ప్రయోజనమే ముంటుంది ? ఎవరు ఆ ఆనంద స్వరూప పరమాత్మను తెలుసుకొని ఉపాసిస్తారో వారే పరమానందాన్ని పొందగలుగుతారు. ఋషులను ఇట్లే ఉపదేశించారు -

**ఏకో దేవః సర్వభూతేషు గూఢః**
**సర్వవ్యాపీ సర్వభూతాంతరాత్మా**
**సర్వాధ్యక్షః సర్వభూతాధివాసః**
**సాక్షీ చేతా కేవలో నిర్గుణశ్చ** ॥

(శ్వేతాశ్వతరోపనిషత్ 6-11)

ఒకే ఒక దేవుడు సర్వభూతాలలోను గూఢంగా దాగియున్నాడు. అతడు సర్వ వ్యాపకుడు. సర్వభూతాంతరాత్మ. సర్వభూతాధి వాసుడు. సాక్షిగా జీవులు చేసే కర్మలను తెలుసుకుంటూ న్యాయంగా ఫలాల నిస్తున్నాడు. అన్నిటిలో నుండియు దేనితో నంటకకేవలునిగా నిర్మలునిగా ఉన్నాడు. అతడు నిర్గుణుడు- సత్వరజస్తమోగుణ రహితుడు. (ఈ త్రిగుణాలు ప్రకృతివేకాని పరమాత్మవి కావు).

అట్టి దేవదేవుని ధ్యానింపుమంటుంది ఈ "దేవస్య పదం.

'దేవ' పదము **"దివు-క్రీడా విజిగీషా వ్యహార ద్యుతి స్తుతి మోద మద స్వప్న కాంతి గతిషు"** అనే సంస్కృత ధాతువుతో నిర్మించ బడుతుంది. ఈ అర్థాలన్నీ పైన చెప్పుకున్న ఏకేశ్వరునికే వర్తిస్తాయి.

అతడు క్రీడా=పరసహాయం లేకుండానే తానొక్కడే క్రీడగా ఈ సృష్టిని చేస్తాడు. విజిగీషా=సదా అతడు జయశీలుడే - అతని నెవరూ జయించలేరు. వ్యవహార=అతడు న్యాయాన్యాయ వ్యవహార కుశలుడు. ద్యుతి= స్వయం ప్రకాశకుడు. స్తుతి= స్తుతింప దగినవాడు. మోద=ఆనంద స్వరూపుడు. మద=మదోన్మత్తుల మద మడగిస్తాడు. స్వప్న=జీవుల నిద్రపుచ్చి విశ్రాంతి నిస్తాడు. కాంతి=కామించదగినవాడు - అందరిచే కోరతగినవాడు. గతి=పదంలోని అర్థాలన్నీ పరమేశ్వరునకు వర్తిస్తాయి. అందుచేతనే మనం అతనిని "దేవుడు" అంటున్నాము.

యజుర్వేదం దేవతలు 33 (త్రయస్త్రింశతా-14-31) అంటుంది. దీనిని వివరిస్తూ మహర్షులు - **"పృథివ్యాదయో ఆష్టావసవః, ప్రాణాదయో దశ వాయవో జీవాత్మా చ. చైత్రాదయో ద్వాదశ మాసాః. విద్యుద్యజ్ఞశ్చ"** అన్నారు.

అష్ట వసువులు, ఏకాదశ రుద్రులు, ద్వాదశాదిత్యులు, ఇంద్రుడు, ప్రజాపతి - ఇవన్నీ కలిపి 33. వసువు లంటే ప్రాణులను వసింపజేసేవి. భూమి జలము అగ్ని వాయువు ఆకాశము అనే పంచభూతాలు, సూర్య చంద్ర నక్షత్రాలు కలిసి ఎనిమిది. ఇవి ప్రాణులన్నిటిని తమయందు వసింపచేస్తున్నాయి. కనుక వీటిని వసుదేవత లన్నారు. రుద్రు లంటే రోదింప జేసేవి. జీవుడు ఈ శరీరాన్ని వదిలిపెట్టి వెళ్ళిపోయేటప్పుడు ప్రాణాలను తనవెంట తీసుకుపోతాడు. దానితో బంధువులంతా రోదిస్తారు. కనుక ప్రాణ అపాన వ్యాన ఉదాన సమానము లనే పంచ ముఖ్యప్రాణాలను, నాగ కూర్మ కృకల దేవదత్త ధనంజయము లనే పంచ ఉపప్రాణాలను మరియు జీవుని కలిపి ఏకాదశ రుద్రదేవత లన్నారు.

ఆదిత్యు లంటే సూర్యకిరణాలు. మన సూర్యకుటుంబములో సూర్యుడు ఒక్కడే అయినా సంవత్సరంలో కొద్ది హెచ్చుతగ్గులుగా అతని కాంతి 12 రకాలుగా ఉంటుంది. ప్రాణి మనుగడకు ఈ పన్నెండు రకాల కిరణాలూ అవసరమే. కనుక వీటిని దేవతలుగా - ద్వాదశాదిత్యులుగా లెక్కించారు. ఇంతేగాక, ఇవి ప్రాణుల ఆయువును హరిస్తున్నాయి. కనుక వీటికి ఆదిత్యులనే పేరు వచ్చింది. ప్రతీ సూర్యాస్తమయంతో మన ఆయువులో ఒక దినం హరించుకుపోతుంది. ప్రాకృతిక దేవతల పరంగా ఇంద్రుడంటే మేఘాలలోని మెరుపు. ఇది ఒకరకమైన విద్యుత్తు. దీనిలో దివ్యగుణాలున్నాయి. సృష్టిలో దీని అవసరం కూడా ఉంది. కనుక ఇదియును దేవతయే. ముప్పై మూడవ దేవత ప్రజాపతి.. అంటే అగ్నిహోత్రం. ఇది ఒక అద్భుతమైన దేవత. సర్వప్రాణులకు మేలుచేయుటేకాక ఇది మిగిలిన 32 దేవతలను పాలిస్తుంది. పోషిస్తుంది. కనుకనే మన ఋషులు **"అగ్నిర్ వై దేవానాం ముఖమ్"** అగ్నిహోత్రం దేవతలకన్నిటికి ముఖం వంటిది - నోరు వంటిది" అన్నారు.

అగ్నిహోత్రంలో వేసిన ఘృతాది ఆహుతులు అణువులుగా పరమాణువులుగా విశ్లేషింపబడి ముందుగా వాయువులో కలుస్తాయి. అవి ఆ వాయువు ద్వారా అన్ని ప్రాణులకు, అన్ని జడపదార్థాలకు చేర్చబడతాయి. కొన్ని అణువులు శ్వాసద్వారా ప్రాణుల శరీరంలో ప్రవేశించి వాటి శరీరాలను శుద్ధిచేస్తాయి. కొన్ని పరమాణువులు జడ పదార్థాలలో ప్రవేశించి వాటిని సంస్కరించి వాటిని ప్రాణిమనుగడకు అనుకూలంగా చేస్తాయి. కొన్ని మేఘాలలో చేరి అందలి జలమును, అవి వర్షించినపుడు భూమిలో చేరి భూమిని శుద్ధిచేస్తాయి. ఈ విధంగా అగ్నిహోత్రం ప్రజాపతి. ప్రజలను పాలిస్తుంది. కనుక యిది ఒక దేవత. ముఖ్యంగా గాయత్రీమంత్ర పూర్వకంగా వేసే ఆహుతులు పృథివీలోకాన్ని పవిత్రపరుస్తాయి. **"పృథివ్యాం విష్ణుర్వ్యక్రంస్త గాయత్రేణ ఛన్దసా** - "యజు 2-25" అని

వేద కథనం.

పై విధంగా యాజ్ఞవల్క్య మహర్షి వేదం చెప్పే 33 దేవతలను వివరించి వీటన్నిటికీ స్వామి, అన్నిటినీ తనయందు గలవాడును కనుక పరమేశ్వరుడు 34వ దేవ యంటాడు. ఈ మహర్షి తెలిపినది వేద సందేశమే.

"యస్య త్రయస్త్రింశద్ దేవా అఙ్గే సర్వం సమాహితాః
స్కమ్భమ్ తం బ్రూహి కతమః స్విదేవ సః ॥
(అథర్వవేదం. 10-7-13)

ఎవని అంగములో సమస్తములైన 33 రకముల దేవతా గణములు సమాహితములై యున్నాయో అతడెవరో చెప్పుమని ఎవరైనా అడిగితే 'స్కంభుడు' - అంటే సర్వాధారుడైన పరమాత్మయేనని చెప్పాలి" అనేది వేద సందేశం. కనుక మనం గాయత్రీమంత్రంతో ముఖ్యదేవత యైన పరమేశ్వరుని ఉపాసిస్తూ, నిత్యం అగ్నిహెూత్రం చేస్తూ మిగిలిన 33 దేవతలను పూజించాలి. అంటే, వాటిని సంస్కరించి - శుద్ధపరచి సద్వినియోగం చేసుకోవాలి.

**'దేవస్య' సారాంశం**

**సమస్త దేవతలకు కేవతవైన ఓ మహాదేవా ! పరమేశ్వర ! నీవు అనేక దివ్యగుణములతో ప్రకాశించు దేవదేవుడవు. నిన్నుపాసించి మేమును నీ దివ్య గుణములను బొందుదుము గాక !**

**ధీమహి**

'ధీమహి' అంటే 'ధ్యానం చేయుదుము గాక' అని అర్థం. పూర్వం వర్ణించిన సచ్చిదానంద స్వరూపుడు, సృష్టికర్తయునైన దేవదేవునియొుక్క 'భర్గః' స్వరూపాన్ని ధ్యానించాలని ఈ పదం చెబుతున్నది. ధానాన్నియు గురించి లోకంలో భిన్న భిన్న అభిప్రాయాలున్నాయి. వివిధ ధ్యానపద్ధతులూ ఉన్నాయి. ఈ సందర్భంలో అన్ని సాంప్రదాయాలవారూ ప్రామాణికంగా అంగీకరించే 'పతంజలి యోగదర్శనం' ధ్యాన్యాన్ని గురించి ఏమి చెబుతున్నదో పరిశీలిద్దాము.

పతంజలి మహర్షి తమ యోగదర్శనాన్ని ప్రారంభిస్తూ ముందుగా 'యోగ' పదమును నిర్వచించారు. "యోగః చిత్తవృత్తి నిరోధః (1-2)-చిత్త వృత్తులను నిరోధించటమే యోగ" మన్నారు. ఇచ్చట చిత్తం అంటే మనస్సు. వృత్తులను నిరోధించటమే యోగ" మన్నారు. ఇచ్చట చిత్తం అంటే మనస్సు. వృత్తులు అంటే దాని వ్యాపారాలు - పనులు. ఆలోచనల నన్నిటినీ నిరోధించటం - ఆలోచనారహిత స్థితిలో ఉండటం యోగ మని భావం. ఆ స్థితిలో జీవునకు ఆత్మ పరమాత్మల సాక్షాత్కారం కలుగుతుంది. అనిర్వచనీయమైన అత్యంతిక సుఖానుభవం - ఆనందం కలుగుతుంది. ఆ స్థితివల్ల కలిగే ప్రయోజనా లేమిటో ఒక ఋషి ఈ విధంగా వివరిస్తారు.

విద్యందే హృదయగ్రంథి శ్చిద్యంతే సర్వ
సంశయాః । క్షీయంతే చాస్య కర్మాణి తస్మిన్
దృష్టే పరావరే। -ముండుకోపనిషత్తు (2-2-8)

ఆ పరోక్షమైన పరావరుడగు పరమేశ్వరుని సాక్షాత్కారం పొందినపుడు - అట్టి యోగియొుక్క హృదయగ్రంథి - అవిద్యాముడి విడిపోతుంది. అంటే దేహాత్మభ్రాంతి తొలగిపోతుంది. సర్వ సందేహాలు తీరిపోతాయి. కర్మ బంధనాలన్నీ తొలగిపోయి ముక్తుడౌతాడు.

అట్టి స్థితిని పొందటమే మానవజన్మయొుక్క పరమలక్ష్యం కావాలంటారు మన ఋషులు. ఆ స్థితిని అందుకోవడానికి పతంజలి మహర్షి 8 అంగములను తెలిపారు. వీటని మనం మెట్లుగా భావించవచ్చు. అందులో ధ్యానం అనేది ఏడవ మెట్టు. అందుచే ధ్యానం చేయగోరేవారు ముందుగా యమ నియమాలను పాటిస్తూ జీవితాన్ని గడపాలి. స్థిరంగా సుఖంగా ఎక్కువకాలం కూర్చోగలిగే ఆసనంలో కూర్చోవాలి. అనంతరం తన శరీరంలోనే ఏదైనా ఒక స్థానంలో - హృదయం, కంఠం, భృకటీ సహస్రారం మొదలైన ఏదేని ఒక స్థానంలో మనస్సును ధారణ చెయ్యాలి. నిలిపి యుంచాలి. అప్పుడు ధ్యేయాన్ని - ధాన్యం చెయ్యాలనుకున్న దానిని ధ్యానం చెయ్యాలి. ఆ ధ్యానం పరిపక్వమయితే సమాధి సిద్ధిస్తుంది. అదే ఎనిమిదవ మెట్టు. వీటిని గురించి కొంత వివరంగా తెలిసి కొందాము.

....पृष्ठ ९ का शेष

के समर्थक आर्यपुरुषों का ही यह भी कर्त्तव्य है कि वे होलिकोत्सव का उस के आनुषङ्गिक अङ्गोंसहित सुधार करके उस को परिमार्जित और पवित्र रूप से जनता में पुनः प्रचारित करें । प्रत्येक आर्यगृह में इस अवसर पर इस पद्धति के विधानानुसार पौर्णमासेष्टि और नवान्नेष्टि होनी चाहिए और प्रत्येक आर्यपुरुष को वैर-विरोध विसार कर सब आय भाइयों से प्रीतिपूर्वक मिलकर प्रेम बढ़ाना चाहिए । इस समय सङ्गीतमण्डलियों द्वारा अवणसुखद गीतवाद्य से हर्षोल्लास के प्रकाश और ईशगुणानुवाद से आत्मा के उत्कर्ष का आयोजन होना चाहिए ।

पौराणिकों में होलिकोत्सव के विषय में यह कथा प्रचलित है कि इस अवसर पर दुराचारी दैत्यराज हिरण्यकशिपु ने अपने परमेशप्रेमी पुत्र प्रह्लाद के सजीव दाह के लिए अपनी मायाविनी भगिनी होलिका द्वारा चिंता रचवाई थी । उस ने सोचा था कि होलिका अपनी राक्षसो माया (हथकण्डों) से प्रह्लाद को जलवाकर आप चिता में से बचकर सुरक्षित निकल आयेगी, किन्तु परमात्मा की असीम भक्तवत्सलता के कारण भक्तशिरोमणि सत्याग्रही प्रह्लाद का तो बाल भी बांका न हुआ और राक्षसी होलिका ही उस चिता में भस्मसात् हो गई और उसी दिन से होलिका राक्षसी के दाह और भक्त प्रह्लाद के सुरक्षित रहने के उपलक्ष्य में होलिकोत्सव प्रचलित हुआ । इस पौराणिक दन्त कथा से भी हम सत्य-दृढ़ता वा सत्यग्रह की शिक्षा ले सकते हैं । संकटों का सागर उमड़े, आपत्तियों की आंधी चले, लोकनिन्दा की नदियां बहा दें, चाहे स्तुति के पाहड़ खड़े करें, परन्तु एक सत्यव्रती का कर्त्तवय है कि वह अपने निश्चित पथ से कभी विचलित न हो । यदि पिता वा अन्य गुरुजन भी सत्यपथ से हटाकर कुमार्ग की ओर ले जायें, तो उन की बात भी न माननी चाहिए ।

अतएव होली हम को सत्याग्रह के विजय का भी स्मरण दिलाती है । उस के द्वारा जहां जनता में नई उमंग, अपूर्व आशा एवम असीम आह्लाद का आविर्भाव होता है, वहां उस से धार्मिक और राष्ट्रीय आदर्शों की ज्वलन्त जागति भी होती है ।

# COMMON HUMAN FUTURE

**A Freedom System**

Freedom, the protection of individual human rights premised on the autonomy and dignity of the individual person, it a multi dimensional concept that lies at the very heart of democracy. We have seen the many ways in which the several branches of the Earth Federation government work together to ensure peace, prosperity and justice. The same is true of freedom. The Earth Federation system as a whole ensures and undergirds freedom through dozens of features working together. It understands that freedom requires health, education and sufficiency of resources. Extreme poverty is itself a denial of freedom. Political freedom must necessarily be complimented by economic and social freedom.

Article 12 of the *Earth Constitution* specifies 18 items articularing a series of political rights and freedoms. It even includes seven items that begin with the word "freedom" - "freedom of thought and conscience, speech, press, writing, etc.; freedom of assembly, association, etc.; freedom to vote and camaign; freedom of religion or no religion; freedom for political beliefs or no political beliefs; and freedom for investigation, research and reporting. Article 13 also includes five items that begin with the words "free" or "freedom"-freedom of choice in work or profession; free public education and equal opportunities; free public health services and medical care; freedom of self-determination for dissenters or minorities; freedom for change of residence anywhere on Earth. The *Earth Constitution* addresses these multiple dimensions of human freedom (see Martin 2010b).

Article 12 calls all the rights that it specifies "inalienable" and states that "it shall be mandatory for the World Parliament, the World executive and all organs and agencies of the World Government to honor, implement and enforce these rights. All persons whose rights have been violated "have full recourse through the World Ombudsmus, the Enforcement System and the World Courts". Ultimately, however, freedom is most fundamentally assued through the establishment of a *global community* under the *Earth Constitution* dedicated to human development and the actualization of human potential. No longer will people be enslaved to multinational corporation, banking cartels, or national security state domination. These impediments will be brought into line by the global founded community of rights and responsibilities deriving from legislation empowering individuals from the ground up.

Aware that the greatest danger to freedom historically has been government itself, especially the Executive Branch of government in control of police and military, the framers of the *Constitution* separated the poice from the Executive branch, as we have sen and abolished the military altogether (beginning with the second operative stage of the Earth Federation). The Executive Branch of the Federation that administers the day to day operations of many government agencies is run by a presidium of five persons, one from each continental division of the planet. The Executive has no power to declare a state of emergency and suspend the *Constitution*, and it hs no power to refuse to spend the budget allocated to it by the World Parliament (Article 6.6).

The World Police and Attorneys General, we have seen, are a separate agency resonsible directly to Parliament (representing the people of Earth). The police possess ony weapons necessary to apprehend individuals and like all government officials, can be removed fro ause. The World Ombudsmus, is an independent agency of government responsible to the World Parliament that can investigate

and indict the police for violations of human rights. The *Constitution* provides a comprehensive system of checks and balances directed toward protecting freedom and democracy.

Article 13 of the *Earth Constitution* presents and additional 19 items articulating a series of human rights that are often referred to as "second generaton rights" and "third generation rights". The rights elaborated in Article 12 consitute the traditional political freedoms deriving from the 18th century democratic revolutions; freedom of speech, assembly, press, religion, etc. The conception of second generation rights developed through the early 20th century and were famously expressed, for example, in the U.N. Universal Declaration of Human Rights of 1948.

These include the rights to decent wages, healthcare, social security, education, etc. They are predicated on the understanding that a supportive *social framework* is a necessary foundation for personal freedom and dignity. These are elaborated in Article 13 of the *Earth Constitution*. However, the *Constitution* understands that even these are insufficient for true freedom. The positive fullness of freedom can only be realized on Earth when peple are also guaranteed the "third generation" rights to world peace and protection of the global environment. The *Constitution* takes freedom to a higher level than any previous historical form.

We have seen that founding principle of the *Earth Constitution* is unity in diversity, a principle that the Federation will promote throughout the government as well as in media, education and law. The second "broad function' of the Earth Federation specified in Article 1 of the *Constitution* states that it must "protect universal human rights, including life, liberty, security, democracy and equal opportunities in life." The entire system of the *Constitution* is built around this and the other five braoad functions specified in Article 1, the first of which (Article 1.1) is world peace, the second of which (1.2) is freedom and the protection of human rights and the fifth of which is "to protect the environment and the ecological fabric of life." The *Constitution* is specifically designed to enhance human flourishing and freedom throughout its many dimensions.

Major impediments to human freedom and flourishing endemic to the present world disorder are removed and prevented from recurring by the integrated functions of the Earth Federation under the *Constitution*. For example, there will be no more national security state, world militarism, authoritarian regimes, rogue militarized terror groups, corporate violations of he dignity of employees, extremes of poverty and deprivation, lack of literacy and education, or lack of adequate health care. Scholars sometimes speak of the defense of first generration political rights as "negative freedom" - the removal of impediments to individual self-determination.

However, the *Constitution* will also enhance the "positive freedom" of actualization within an empowering community premised on unity in diversity. The supporting matrix of a community of rights and responsibilities premised as well on second and third generation rights provides the framework for the creative actualization of our individual and collective human potential. The protection of "life, security and equal opportunities" on Earth, institutionalized throught a global community of freedom (as specified in Article 1) will vastly empower the people of Earth. Freedom will no longer merely be a "freedom from" but will become the positive fullness of "freedom for." The *Earth Constitution* estabishes a dynamic and powerful freedom system.

**A Sustainability System**

Environmental destruction (like war, poverty, injustice, and denial of freedom) is a direct consequence of our present global political and economic system. If companies have to

consider the bottom line in a competitive situation where they must make a certain margin of profit or go out of business, then the incentive to *externalize* costs into the air, water and soil to the detriment of the planetary ecosystem and future generations is tremendous. Genuine sustainability can only be achieved when the common good and the welfare of future generations are factored into the economic equation. Sustainability means that the resources taken from the Earth are either replace fully (for example, lumber used in moderation can be replaced though replanting forests) or used sparingly until ways can be found to substitute artificial resources for essential natural resources (Daly 1996)

The *Earth Constitution* contains dozens of references to "the environment" and the "ecology" of our planet, indicating that a major premise of the Earth Federation will be environmental sustainability. The *Constitution* mundializes those natural resources that are vital to the well-being of humanity and that are limited in quantity or non-renewable (Article 4). Hence, they are taken out of the hands of giant orporate monopolies who today exploit them for the private profit of a few at the expense of most of humanity and future generations. The Provisional World Parliament has taken steps to enable this consitutional mandate, for example, by passing the Water Act at its Eight Session. Multinational corporations have bought up water rights in India and elsewhere and used their "right to private property" to blackmail ordinary citizens who need water (see Shiva 2002).

In his book *When Corporations Rule the World* (1995), former Harvard Business School professor, David Korten, chronicles the devastation of our natural resources as well as the environment by multinational corporations based in the imperial centers of capital. Natural resources are essential for human well-being of all the Earth's citizens as well as future generations. The Provisional World Parliament created the World Oceans and Seabeds Authority to supervise the vast riches of the oceans for the welfare of humanity, oceans corporations without any democratic governmental supervision.

With the vast power placed in human hands by engines, electricity, specialized machines and computers, the ecosystems of the Earth began to be destroyed at a rate far beyond the ability of nature to heal and repair damages caused by human interference. The technoogical revolutions of the 18th and 19th centuries continued into the electronic and digital revolutions of the 20th and 21st centurries - placing such power in human hands that human activity in its present forms may well destroy the life-support systems of the entire planet and collapse the fabric of life to the point where higher forms of life can no longer survive upon the Earth. The forests of the world, for example, provide the plantary ecosystem with much of the oxygen that supports all aerobic forms of life. They bind carbondioxide that is exhaled by most living creatures and produced by all forms of comustion. They moderate the climate and provide habitats for most of the vast bio-diversity of the Earth; they draw fresh water from the ocean coasts into the interior of continents. Yet the forests of the Earth are disappearing at the rate of an area one half the size of California each year.

In addition to forests, agricultural soils of the Earth are rapidly disppearing. Unsustainable agricultural practices are rapidly depleting topsoils of the planet to the point where vast areas have become unsuitable for agriculture and have been converted to grazing lands. Yet overgrazing worldwide is turning even these areas on every continent into desert wasteland, places that cannot be used to support most life. Runoff from the use of pesticides is poisoning water

supplies and ecosystems. Billions of tons of topsoil are lost each year to erosion because of these unsustainable agricultural practices.

Regarding fresh water, the over-pumping of aquifers and overuse of water is dropping water tables worldwide, causing water crises and shortages in many areas of the world. The cities fresh air supplies. Hundreds of millions of gasoline and internal combustion engines and other sources of air pollution spew polutants into the air. et the atmosphere of the Earth is necessary to support all higher forms of life and is at the heart of the ecosystem of our planet.

These cities also produce immense amounts of polluted water, garbage and trash wastes that are filling and poisoning countrysides, rivers and oceans worldwide. At the same time, the human population countinues to grow at the rate of some 80 million new fresh water, clean air and agricultural and forest resources to support them throughout their life-spans, and every one of whom produces waste materials that are returned to the environment (cf. Caldicott 1992; Renner 1996, Daly 1996; Speth 2004).

The principle of Gaia, the idea that the entire Earth (as it has evolved over its 4.6 billion year existence) forms and encompassing of people. This awareness grows as planetary phenomena signaling the alteration of the entire global ecosystem become widely know. Phenomena such as global warming, melting of the polar ice caps, depletion of the ozone layer, collapsing of entire ocean fisheries, rapid extinction of species on a daily basis, inceased planeary diasters and superstorms and possible inversions of global ocean currents and weather patterns are well understood (Lovelock 1991).

Thoughtful human beings today have understood that human life is inseparable from the web of life on Earth. The have understood that we must alter our economic, social and political practices rapidly to bring human civilization into harmony with the planetary web of life that sustains us. They understand that all development must be sustainable, that it must support human life in the present in ways that do not diminish the life-prospects of future generations. Today, virtually all societies and all nations are living at the expense of future generations, both of humans and other species (Caldicott 1992; Daly 1996; Speth 2004). Actualizaion of our life-prospects diminishes their life-prospects. At the current rate of destruction, it is even possible that we will reduce their life-prospects to zero.

The *Earth Constitution* and the work of the Provisional World Parliament have ben dedicated to addressing these horrific consequences of the present world disorder. This premise of our global, democratically conceived, well-being is behind the Parliament's passage of the World Hydrogen Energy Authority (WLA#10) to spearhead research and conversion to renewable clean energy for the world, the Hydrocarbon Resource Act (WLA #16) to conserve, regulate on behalf of a clean environment and utilize democratically the world's remaining hydrocarbon resources and the Water Act (WLA #30) that recognizes clean water as a right of all persons and takes steps to protect the Earth's diminishing water resources, restore sources of fresh water to the Earth and democratically apportion these resources to all persons on Earth.

Recognizing not only that the global environment is threatened but that it is already seriously damaged (as the *Manifesto of the Earth Federation* demonstrates at length), the Provisional World Parliament at its Second Session adopted WLA #6 creating the Emergency Earth Rescue Administration (EERA). The task of the EERA is to spearhead the gigantic task of restoring the environment of the Earth once the first operative stage of world government under the *Constitution* has been activated. Millions of trees will need to be planted, major initiatives will be

needed to restore diminished agricultural lands and emergency efforts will be required to reclaim sources and conditions for fresh water for the peoples of Earth.

The Parliament also passed WLA #9 creating, within the World Administration of the *Constitution,* a Global Ministry of the Environment to facilitate conversion to sustainability and staff the EERA. Such momentous tasks, absolutely necessary for a decent future for the Earth, can never be accomplished by the fragmented system of nation-states for the U.N. The U.N., which is a mere confederation of sovereign nation-states, has held three global conferences on the destruction of our planetary environment: in Rio de Janeiro, Brazil, in 1992, Johannesburg, South Africa, in 2002 and Copenhagen, Denmark, in 2009. There is common aggreement that these were all complete failures in dealing with our environmental crises.

The Provisional World Parliament has created a network of practical, pragmatic and immediately necessary laws and agencies to deal with the immense problems of global environmental restoration and conversion of sustainability. As we have seen, the very first article of the *Earth Constitution* specifies that the fifth environment and the ecological fabric of life from all sources of damage and to control technological innovations whose effects transcend national boundaries, for the purpose of keeping Earth a safe, healthy and happy home for humanity". Both the *Constitution* and the Parliament are dedicated to creating a world system adequae to this task.

The *Constitution* explicitly required the government of the Earth Federation to protect the ecological fabric of life on Earth, only does the *Constitution* make this a primary mandate of the Earth Federation, but in its second bill of rights (Article 13) makes respect for the Gaia principle a right of the people of Earth themselves and a "directive principle for the world government" to actualize this right. Article 13, numbers 9, 10 and 11 read as follows. People have a right to: "protectionof the natural environment which is common heritage of humanity against pollution, ecological disruption or damage which could imperil life or lower the quality of life" (9); "Conservation of those natural resources of Earth which are limited so that present and future generations may continue to enjoy life on planet Earth" (10); and "assurance for everyone of adequate housing, of adequate nd nutritious food supplies, of safe and adequate water supplies, of pure air with protection of oxygen supplies and the ozone layer and in general for the continuance of an environment which can sustain healthy living for all" .

Clearly, here again, the *Constitution* explicitly recognizes the need for human economic, political and social insitutions to conform to ehg Gaia principle (which is the principle of sustainability) protecting the whole of the planetary environment for future generations. The key to a sustainable civilization is not only to promote education concerning the principles of natural ecology. This effort alone is insufficient and will ultimately fail unless the antiecological institutions of the modern world, described above, are also transformed according to the scientific principles of natural ecology.

For this to happen, the entire human community must be joined together through the dynamic of genuine unity in diversity that constitutes a complementary principle of social ecology in human life, uniting all people under nonmilitary democratic world government. Only thus can the Gaia principle become a guiding principle for all human political, ecnomic and social processes. These principles of social ecology are inseparable from the principles of natural ecology. It is necessary to do for humanity what the natural Gaia principle does for nature. The *Constitution for the Federation*

*of Earth* joins the two together to create a truly ecological and sustainable world order.

**Conclusion**

The *Constitution* and its elaboration through the work of the Provisional World Parliament provide the necessary conditions for a peaceful, prosperous and sustainable world system. Throughout our model, howver, we have assumed the creative input of the human beings with integrity, vision and creative energy who must enliven the system outlined by the *Constitution* and the Parliiament. The Earth Federation needs Parliamentarians, Judges, Administrators, Police and Ombudsmen of who are capable of cooperatively working as part of an open ended, democratic learning community informed by the dynamics of systems thinking and the principles of holism. We need dedicated people who are willing to beging living from this moment forward according to the ethical and legal principles embodies in the *Earth Constitution.*

Such persons will serve as the sufficient condition for actualizing the unity in diversity of this world system. Such persons in our present historical situation must also serve as the sufficient condition for the ratification and implementation of the *Constitution.* The necessary features of a holistic world system can be described in print. The sufficient conditions for its actualization depend on the love, aspirations, sonscience and intelligence of actual human beings. Within the Earth Federation Movement today, citizens all around the world are actualizing this vision and hve begun living according to the *Earth Constitution* no longer according to the illegitimate and immoral system of warring nation states.

The holism of the new, liberating paradigm discovered by 20th century science was embodies in the *Earth Constitution* by establishing social and economic systems designed to produce the holistic consequences of peace, prosperity, justice, freedom and sustainability. It is this insight that is essential to human liberation. War and poverty are not essential to the human condition but are consequences of the global systems under which we currently struggle. If we establish different systems, different consequences will follow. You as reader are engaging the most important document of the 20th century, which can form the bases for a new and liberating world system in the 21st century.

Study of the *Constitution for the Federation of Earth* repays the student richly. For a model of a future world order emerges that not only transforms the fragmented and outdated paradigms of the present world disorder but shows itself to be entirely practical and imminently possible under the guidelines provided by Articles 17 and 19. The coneptual model presented here and affimed by the Provisional World Parliament at its 12th session in Kolkata, India, in 2010 presents only the highlights of the integrated planetary system initiated by the *Earth Constitution* and the Provisional World Parliament. I hope that the parameters of this model that I have sketched in this document may inspire people to evermore intensive study of the *Earth Consitution* and modeling of the transofrmed world system that it engenders.

As people begin to understand the vision, there is tremendous urgency that they also act on that vision with creativity, integrity and energy. The *Constitution* must be ratified in a founding ratification convention according to the Protocols already developed by the Provisional World Parliament. It converts the present failed world system to peace, prosperity, justice, freedom and sustainability. It replaces the U.N. Charter, with real democratic government keeping the valuable agencies of the U.N. as ministries of the Earth Federation. You are about to read the most important document produced by the 20th century- the document that will provide the foundation stone for the paradigm shift of the 21st century. *Nothing less than the fate of humanity and our precious planet Earth are at stake. We invite your participation. We invite you to a life of "civil obedience".*

ఋషి జన్మదిన సందర్భమున స్వామి దయానంద్ సరస్వతి గురించి హిందూ ధర్మము అనే టి.వి.-5 ఛానల్‌లో మాట్లాడుతున్న మంత్రి విఠల్ రావు ఆర్య, హరికిషన్ వేదాలంకార్, బసిరెడ్డి మరియు ఇతరులు

# మాంసాహారమును విడువలెను - శాఖాహారమును స్వీకరించవలెను : అసలు ఎందుకు ?

ఈ సమస్త కష్టకారక పరిస్థితుల మధ్య కూడా "ఆశ" అనే ఒక కిరణం మెరుస్తు న్నట్టుగా కనిపిస్తున్నది. ఈ దేశము విదురుడు, చాణక్యుడు, దయచందుడు, రవీంద్రానాథ్ ఠాగూర్ మరియు గాంధి యొక్క దేశము. ఇది "ఏకలా చలోరే" ఒక్కడివే నడువు అనే మాటను విశ్వసించును. చెడుకు ప్రారంభము సమూహము నుండి మరియు మంచి కేవలము ఒక్కరితోనే ప్రారంభించబడుతుంది దీనికి చరిత్ర సాక్ష్యము. శాఖాహారి ఆందోళనమును ఒకరు లేక ఇద్దరు వ్యక్తులు ప్రారంభించినా అవి తీవ్రమగును., వ్యాపకమగును, ప్రభావము చూపును మరియు సఫలమగును ఎందుకనగా దానితో విజ్ఞాన మున్నది, ఆధ్యాత్మమున్నది, చికిత్సాశాస్త్రమున్నది, అర్థ శాస్త్రమున్నది, నైతికత్వము మరియు మానవత్వమున్నది. ఎప్పుడైతే ఈ దేశము మాంసాహారమనే శాపము నుండి ముక్తిని పొందునో అప్పుడు పశు సంపదలో అనుకున్నంత మాంసా హారమనే శాపము నుండి ముక్తిని పొందునో అప్పుడు పశుసంపదలో అనుకున్నంత వృద్ధి జరుగును మరియు పాలు, పెరుగు, నెయ్యి మొదలైన వాటి నదులు మళ్ళీ ప్రవహించును, ఏ పసి పిల్లలు మరియు ప్రసవించిన ఏ తల్లి కూడా వీటి నుండి వంచితులై ఉండరు. పేడతో ఎంత వంట గ్యాసు, కరంటు మరియు ఫ్యూల్ లభించునంటే గ్యాస్ సిలండర్ కొరకు లైన్ కట్టేపని ఉండదు, కరంటు బిల్లు ఇబ్బంది పెట్టదు, డీజిల్ పెట్రోల్‌ను విదేశాల నుండి తెప్పించే అవసరమూ ఉండదు. స్వదేశీ ఎరువు ఎంత తయారవు తుందంటే రాసాయనిక ఎరువులపై ఆధారపడ నవసరము ఉండదు, వ్యవసాయ భూమి బీడుగా మారకుండా కాపాడబడును, ఏ వందల కోట్ల రూపాయల సబ్సిడీని రాసాయనిక ఎరువుల పరిశ్రమలకు ఇస్తారో అది అంతా మిగిలిపోవును. సేంద్రియ ఎరువులతో ఉత్పన్నమైన ఆరోగ్యవంత మైన అన్నము అనగా బియ్యము, పప్పులు, కూరగాయలు, పాలు, పండ్లు, మేత, నూనె మొదలైనవి లభించితే సమస్త రోగాల నుండి ముక్తి స్వతఃగానే లభించును. పంచగవ్య ములను (ఆవు పాలు, పెరుగు, నెయ్యి మజ్జిగ మరియు మూత్రము) సేవించడము వలన ఎలోపేథిక్ చికిత్సను విడిచి ఆయుర్వేదమును పునః స్థపించడముచేత మళ్లీ ప్రతీ సంవత్సరము వేల కోట్ల రూపాయల విదేశీ ధనాన్ని కాపాడుకోవచ్చును. పర్యావరణము ప్రదూషణము నుండి ముక్తిని పొందితే గంగా, యమునా, గోదావరి మొదలైన నదులు కూడా స్వచ్ఛముగా, శుద్ధముగా, పవిత్రముగా మారును. మానసిక స్థితి సాత్వికము కావడముచేత అపరాధ మానసిక వృత్తుల గ్రాఫ్ పడిపోవును మరియు ఆధ్యాత్మము బలపడును, మద్యపానముతో ముక్తి లభించును ఎందుకనగా మద్యపానానికి మాంసాహారానికి దగ్గర సంబంధము కలదు.

గోహత్య వలన ఏ సాంప్రదాయిక సుహృత భావము చెడిపోవుచున్నదో, సాంప్రదాయిక అల్లర్లు జరిగే అవకాశమున్నదో అది తనంతట తానే సమాప్తమగును. గోమయముపై ఆధారపడిన లఘు పరిశ్రమలు ఉదా: సబ్బులు, కాగితము, గ్యాస్, ప్లాయి, ఇటుకలు వీటి నిర్మాణము చేత గ్రామీణ ప్రాంతాలలోనే జీవనోపాధి కొరకు కొత్త ఆశలు చిగురించును. దీని వలన నగరాలవైపు గ్రామీణుల వలస ఆగిపోవును. భూకంపాలు, సుడిగాలులు, అకాల దుర్భిక్షము మొదలైన వినాశకారక ప్రాకృతిక ఆపదల నుండి ముక్తి లభించును. పక్క దేశాలలో జరిగే పశువుల దొంగ వ్యాపారము నుండి ముక్తి లభించును. దీని వలన రాజ్యాంగము లేక నీతి పట్ల విశ్వాసము మరియు గౌరవము కూడా పెరుగును. దేశము యొక్క మాంసము, తోలు పరిశ్రమ, రాసాయనిక ఎరువులు, మద్యము, ట్రాక్టరు మొదలైన వాటితో పొందే ధనము నుండి ఏ ఎన్నికల పద్ధతి భ్రష్టుపట్టుచున్నదో అది శుద్ధమగును. ఇదే ఆ ప్రశస్త పథము. దీని వలన భారతదేశము యొక్క ఆర్థిక వ్యవస్థలో కోరుకున్న మార్పులు తీసుకువచ్చి ఈ దేశము మళ్ళీ బంగారు పిట్టగా, స్వర్ణభూమిగా, దేవభూమిగా మారును. భారతదేశంలో వనరుల లోటు లేదుకాని ప్రగతిశాల దృష్టికోణము, రచనాత్మక రీతి నీతుల మరియు సకారాత్మక శక్తి యొక్క లోటు కలదు. ఈ లోటును ఈ దేశము యొక్క ప్రాచీన జీవన మూల్యములను స్వీకరించడము చేతనే దూరము చేయవచ్చును. ఈ దేశము యొక్క ప్రాణము వేదాలలో, ఉపనిషత్తులలో, దర్శనాలలో, స్మృతులలో, రామాయణములో మరియు భగవద్గీతలో ఉండును అందువలన భారతదేశము యొక్క అభివృద్ధి బాట ఈ ప్రాణముల గుండానే మొదలగును. ఆధునిక విజ్ఞానము, చికిత్సా శాస్త్రము, అర్థశాస్త్రము, సమాజ శాస్త్రము మరియు మానవ శాస్త్రము ఈ సత్యాన్ని తెలుపుతున్నది. గొప్ప సంతులు, సంప్రదాయులు ఈ దేశంలో ఏ సామాజిక, సమన్విత సంస్కృతిని సృజించారో అది కూడా ఈ వైపే చూపిస్తున్నది. మీతో ప్రార్థన -

మనము ఎక్కడైతే ఉన్నామో ఒక్కరమే ఉండని లేదా ఏదైనా సంగఠనం, సంస్థానము, సంప్రదాయము లేదా సమూహముతో కూడి ఉన్నాము. స్వహితము, సమాజ హితము, రాష్ట్రహితము మరియు ప్రపంచహితము కొరకు మన ప్రథమ కర్తవ్యము ఏమిటంటే మనము ఏ కారణము చేతనైనా మాంసాహారులమైతే ఆ కారణము యొక్క నిరుపేక్ష చేసుకొనవలెను. రెండవ కర్తవ్యము ఏమిటంటే తన సాంప్రదాయము లేక జాతిగత సమాజము, సంస్థానము, సంగఠనము మాంసాహారమును విడిచి శాఖాహారమును స్వీకరించాలని శ్రద్ధతో నిష్ఠతో ప్రయత్నము చేయవలెను. ఈ కార్యము విఫలమైనా కూడా పరవాలేదు. మూడవ కర్తవ్యము ఏమిటంటే మన స్తరానుగుణంగా ఫేస్‌బుక్, వెబ్‌సాయిట్, ఇంటర్‌నెట్ మొదలగు ఆధునిక సంచార సాధనాల ప్రయోగము శాఖాహార ప్రచారము కొరకు చేయవలెను. మన నాల్గవ కర్తవ్యము ఎలక్ట్రానిక్ మీడియా, సోషల్ మీడియా, ప్రెస్‌మీడియా, ఫిల్మ్ ఇండస్ట్రీ వారిని ఎట్టి పరిటస్థితుల్లోనైనా మాంసాహారానికి ప్రోత్సాహనము ఇవ్వకూడదని మరియు శాఖాహార ప్రచారములో సహాయకులు కావాలని తయారు చేయాలి. మన ఐదవ కర్తవ్యమేమనగా మన ముందు ఎంత భయంకరమైన కఠిన పరిస్థితులు వచ్చినా మనము ఏ కనిష్ఠ భావముతో శాఖాహారమును ఒక మిషన్ వలె ఒక జీవనపద్ధతివలె ఎల్లప్పుడూ కాపాడవలెను. మన ఆరవ కర్తవ్యమేమిటనగా తన ఆర్థిక సామర్థ్యాము సారముగా తమ స్వయముగా లేక ఎవరితోనైనా కలిసి లేక తన సంగఠనము, సంస్థానము నుండి ఈ పుస్తకము యొక్క హిందీ లేక ఇంగ్లీష్, ఉర్దూ, పంజాబీ, బెంగాలీ, గుజరాతీ, మరాఠీ, తమిళము, తెలుగు, కన్నడ, ఉడియా, అస్సామీ మొదలగు భాషలలో అనువాదము లేక ప్రకాశనము చేయించి దీనిని అధికాధిక సంఖ్యలో నిశ్శుల్కము వితరణ చేయవలెను ఇతరులను ఇలా చేయడానికి ప్రేరేపించవలెను. ఈ పుస్తకము యొక్క సారాంశమును కూడా ఒకటి రెండు పేజీల కరపత్రాల వలె ముద్రణ చేయించి పంచవచ్చును. ఈ విధమైన ముద్రిత సామగ్రి యొక్కసూచన మన మిషన్ యొక్క ముఖ్యాలయముకు కూడా పంపవలెను. మన ఏడవ కర్తవ్యము ఏమనగా శాఖాహార విషయాన్ని తీసుకొని వివిధ స్థలాల నుండి సెమినార్‌లు నడిపించాలిశాఖాహార

సమ్మేళనాలను ఏర్పాటు చేయాలి, ప్రచార యాత్రలు తీయవలెను, ముఖ్య మార్గములలో లేక స్థానాలలో పోస్టర్లు, హోర్డింగులు అతికించాలి. ఎందుకనగా మనము మాంసాహారాన్ని విడిపింపజేయాలి అందుకు మన శ్రద్ధ మరియు ప్రచారము మాంసాహార జనుల క్షేత్రములో సమాజములో, సాంప్రదాయములలో, జాతులలో వారి మాతృభాషలోనే చేయవలెను. ఏ సముదాయ మైతే నిరక్షరాస్యులో అక్కడ ప్రచారము యాత్రల చేత, సమ్మేళనాల చేత, సంగోష్ఠుల చేత చేయవలెను.

శాఖాహార మిషన్ ఒక సమగ్ర ఆందోళన వలె నడువలెను అందుకు ఒక విశేష సంస్థ దీని శ్రేయస్సును సమకూర్చడం నుండి కాపాడవలెను. ఈ కార్యానికి సంబంధించిన సమస్త సంగఠనములు తమ తమ స్తరానుగుణంగా ఏది సరియైనదో అదే విధంగా చేయవలెను. ఈ కార్యము ధనసంపాదనకో శ్రేయస్సును పొందడానికో లేక ఏదైనా స్వార్థపూర్తి కొరకో కాకుండా సమస్త మానవ కళ్యాణము కొరకు స్వీకరించవలెను. ఈ పని యొక్క ఒకే ఒక్క ఉద్యేశ్యమేమిటంటే మాంసాహరాన్ని విడిపించ వలెను అందుకు ఏదైనా విశేష సాంప్రదాయము యొక్క లేక సముదాయము యొక్క ధార్మిక భావనలు దెబ్బ తినకుండా శ్రద్ధ తీసుకొనవలెను. ఈ పూర్వాగ్రహముతో లేక కోపముతో కాదు. మనము ఈ విషయముపై కూడా శ్రద్ధవహించ వలెను. ఏమిటంటే కేంద్ర ప్రభుత్వములోనో లేక రాష్ట్ర ప్రభుత్వములోనే ఎల్లప్పుడు ఈ విధమైన కుచేష్టలు నిండి ఉండును. అవి మన వ్యక్తిగత హితములను, మన రాజనీతి హితములను మరియు మనకు నచ్చిన ఉద్యోగపతుల హితములు అన్నింటికన్నా గొప్పవని అనుకొని మాంసాహారమును మరియు మద్యపానమును అత్యధికముగా ప్రచలితము చేయడానికి, రాసాయనిక ఎరువుల మరియు ట్రాక్టర్ల ఉపయోగమును ప్రోత్సహించే చెడు నీతులను తయారు చేసి వాటిని క్రియాన్వితము చేసే దిశలో సక్రియులై ఉందురు. ఉదాహరణకు మీరందరు ఫిబ్రవరి, 2013 రెండవ వారంలో 'అమర్ ఉజాలా' మరియు 'దైనిక్ జాగరణ్' మొదలగు పత్రికల్లో ముద్రింపబడిన ఈ సమాచారము తప్పక చదవి ఉండవచ్చు ఏమనగా కేంద్ర ప్రభుత్వము తన స్తరానుగుణంగా గోమాంసమును తినే సలహా ప్రజలకు ఇస్తున్నది. కేంద్ర ప్రభుత్వము యొక్క అల్పసంఖ్యాక మరియు బాల వికాస మంత్రాలయము ఉత్తర్ ప్రదేశ్‌లో అల్పసంఖ్యాక బహుళ క్షేత్రాలలో శరీరంలో ఆక్సీజన్ సంరక్షణకు మరియు రక్తము తయారు కావడానికి ఆకు కూరలతోనే కోడి మాంసము మరియు ఆవు మాంసమును తినుమని సలహా ఇస్తున్నది. ఈ సలహాను ధైర్యంగా పత్రములను పంచి చేయుచున్నారు. ఎప్పుడైతే హిందూ సంగఠనములు దీనికి విరుద్ధంగా గొంతు ఎత్తారో, ప్రదర్శనలు చేసారో, ఈ విషయాన్ని పార్ల మెంటులో లేవనెత్తారో అప్పుడు ఆకరపత్రాలపైన ఆంక్ష విధించారు మరియు ఎవరి దగ్గరైతే ఈ కరపత్రాలు ఉన్నాయో వాటిని ప్రశాసనముకు తిరిగి ఇవ్వమని విజ్ఞప్తి చేశారు. ఈ సంఘటన మవానా (మేరఠ్) క్షేత్రానికి సంబంధించినది మరియు ఈ విషయము అందరికి తెలిసినదే ఉత్తర ప్రదేశ్‌లో గోహత్యకు విరుద్ధ ఆంక్షలు ముందు మండే ఉన్నాయి. ఉత్తరప్రదేశ్ అలహాబాద్ (ప్రయాగరాజ్)లో మహకుంబ మేళా జరుగుతూ ఉండేను అక్కడ హిందూ సంత మహాత్ములు మరియు శ్రద్ధాలు జనులు కోట్ల సంఖ్యలో ఉ పస్థితులై ఉండెను. ఇటువంటి సమయమున ఈ కుచేష్టలు ప్రాంతానికి ఎంత కష్టదాయకమైయ్యేవి. ఈ విధంగా ఈ అభిమాన్ యొక్క సంయోజకులు అర్థము చేసుకోలేరా. ఇటువంటి ఉద్దండ పూరితమైన పనులను సాధారణంగా ప్రభుత్వము దగ్గర ఉన్న ఉద్దండ తత్వములు తెలిసి చేస్తూ చేయిస్తూ ఉంటా. 'సండే హెూయా మండే ఖాబ్ ఖావో అండే' అనే విషయాని టీ.వి. చానల్ల ద్వారా లేక పత్రపత్రికల ద్వారా ప్రచారాన్ని కూడా ఈ దుష్ట శక్తుల చేతనే జరిగినది. ఢిల్లీలో ఆయోజింప బడిన రాష్ట్ర మండల ఆటల సందర్భమున విదేశీ ఆటగాళ్లకు, అధికారులకు మరియు అతిధులకు ప్రభుత్వము ద్వారా గోమాంసమును వడ్డించే సిగ్గుమాలిన ఏర్పాట్ల సమాచారము ఎప్పుడైతే ఢిల్లీలో 5 జనవరి 2010 నాడు హింస్తాన్ టాయిమ్స్‌లో ముద్రితమైతే పైన పేర్కొన్న వాక్యము యొక్క లేఖకుడు దీనికి విరుద్ధంగా ఆందోళన చేసెను. ఢిల్లీ ముఖ్యమంత్రి శ్రీమతి శీలా దీక్షిత గారిచే 23 జనవరి 2010న మరియు మహామహిమ్ రాష్ట్రపతి శ్రీమతి ప్రతిభా దేవీ సింగ్ పాటిల్‌చే 24 జనవరి 2010న కలిసి రెండు ప్రతినిధి మండలములు తమ విజ్ఞాపనమును ఇచ్చి ప్రభుత్వమును ఈ విదంగా మేల్కొల్పెను. 1994లో చెప్పిన విధంగా చట్ట పరంగా ఢిల్లీలో ఆవులను చంపి, మాంసమును చేసి, తన దగ్గర పెట్టుకోవడము వడ్డించడము లేక బయటినుండి తెప్పించడము నేరము. ఈ చట్టాన్ని ఉ ల్లంఘించినట్లయితే ఒక సంవత్సరము జైలు శిక్షపడును. దీని పరిణామమే రాష్ట్ర మండల ఆటలలో గోమాంసమును వడ్డించకూడదనే ఆదేశమును రాష్ట్ర పండల ఆటల ఆయోజన సమితి అధ్యక్షుడు సురేశ్ కల్‌మాడే చే ఇవ్వబడినది. ఇది 23 జులై సమాచార పత్రములలో కూడా ముద్రితమైనది. అందువలననే 25 జులై 2010న జంతర్‌మంతర్‌లో అనుకున్న విశాల ప్రదర్శనను మేము ఆపివేసినాము. ఢిల్లీ నగర పాలికలో పక్ష ప్రతిపక్షములు రెండూ కూడా గోమాంసమును వడ్డించే ఈ యోజనను గట్టిగా నిందిచారు. దేశమంతటా కోళ్ళపెంపకము, పందుల పెంపకము, కుందేళ్ళ పెంపకము, చేపల పెంపకము మొదలైన వ్యవసాయ ములను అగ్గువ చేయడము, ఎక్కువ కాలములోను ఇప్పించడము ఈ దుష్టశక్తుల చేతనే వ్యాపించబడినది. దీనిచే ఎక్కడైతే మద్యము అమ్మకాలు పెరిగనవో అక్కడ అపరాధముల గ్రాస్ కూడా పెరిగినది. ఇటువంటి దుష్ట శక్తులపై దృష్టిని పెట్టి వారి దుష్ట కోరికలను సఫలము రాకుండా మనము కూడా సావధానముగా, సక్రియముగా మరియు కటిబద్ధులుగా ఉండవలెను.

నిజానికి మన రాజ్యాంగ నిర్మాతలచే రాజ్యాంగాన్ని తయారుచేసే సమయమున ఒక పెద్ద పొరపాటు అనుచ్ఛేదము - 19లో జరిగినది. ఈ అనుచ్ఛేదము యొక్క ఒకటవ ఖండమున వాక్ స్వాతంత్ర్యము, సమ్మేళన స్వాతంత్ర్యము, సంగఠన స్వాతంత్ర్యము, భారతదేశములో తిరగడము, నివసించడము మరియు వ్యాపారము యొక్క స్వాతంత్ర్యము ప్రస్తావింపబడెను. దీనిలో ఏదైనాకూడా వృత్తి, ఉపజీవిక, వ్యాపారము లేక వ్యవసాయము చేసే ఈ వెసులుబాట పేరుతో వధశాలలను నడిపించడము, మద్యము దుకాణములు, బీడీ-సిగరేటు, పాన్, గుట్‌కా మొదలైన వాటి ఫ్యాక్టరీలు తెరవడము, మాంసము యొక్క వ్యర్థాలతో ఉత్పాదకత తెలుపడము, వైశ్యావృత్తిని వ్యవసాయమని మరియు నపుంసకులకు లైసెన్సులు ఇచ్చి మూర్ఖత్వమును పెంచడము మొదలగు అసామాజిక కార్యములు పెరగడానికి మార్గము ఈ అనుచ్ఛేదముతో చూపడుచున్నది. ఏ సమలైంగికత్వము చట్టపరంగా దండనీయ అపరాధముగా ఉండెనో ఇప్పుడు అదే అనియంత్రిత స్వేచ్ఛతో అపరాధము కాదు. వివాహము కాకుండానే స్త్రీ పురుషులు ఒకే ఇంట్లో ఉంటూ వైవాహిక జీవనమును గడపడము లేక పురుషుడు పురుషునితో మరియు స్త్రీ స్త్రీతో వివాహము చేసుకోవడము కూడా ఇప్పుడు చట్ట బద్ధమే అయినది. అందువలన ఈ అనుచ్ఛేదములో సంశోధన చేయడము అనగా వృత్తి, ఉపజీవిక, వ్యాపారము చేత సమాజములో క్రూరత్వము, హింస, వైమనస్యము, సాంప్రదాయ కత్వము, అశ్లీలత్వము పెరగడము, ప్రకృతి సమతుల్యత చెడిపోవడము లేక పర్యావరణము కలుషితము కావడము మరియు ప్రాకృతిక ఆపదల పృష్ఠభూమి తయారు కావడము వ్యక్తి యొక్క

శారీరిక, మానసిక, ఆత్మిక స్వాస్థ్యమునకు నష్టము చేకూర్చడము, ఏదైనా విశేష సముదాయము యొక్క ఆస్థ మరియు భావనలను కించ పరచడము ఇటువంటి పనులను సంపూర్ణముగా నిలిపివేయవలెను. నిజానికి ఒకటవ ఖండములో ఈయబడిన వెసులుబాటును ఇదే అనుచ్ఛేదము యొక్క 2, 3, 4, 5, 6, 7వ ఖండములలో ఈ స్వాతంత్ర్యము యొక్క హరణము రాజ్యముచే చేయబడునని విధానమైతే ఉన్నది కాని లోక సమ్మతము యొక్క వివరణ ప్రస్తావించలేదు. రెండవది భారతదేశములే ఏ ప్రాంతములోనైనా నివసించే లేక వ్యాపారము చేసే అధికారము ధారా-370 మరియు 369 ప్రతిబంధించి నవి దీనిని కొన్ని విశిష్ట ప్రాంతములు అనుసరిస్తున్నవి. వలసదారులు ఎంత మంచివారైనా లేక ఉద్యములైనా సరే మరియు వ్యాపారము ఎంత జనకళ్యాణకారమై ఉన్నా సరే. కాశ్మీర్‌లో భారత ప్రభుత్వము ప్రాంతీయ ప్రభుత్వము యొక్క అనుమతి లేకుండా పోస్టాఫీసు తెరవాలన్నా వారికి దీని గురించి భూమి లభించదు. నాగాలైండ్‌లో ఒకవేళ మనము ఏదైనా స్కూలు లేదా ధార్మిక సంగఠనము తయారు చేయలన్నా అక్కడ చేయ లేము. నిజానికి ఇది ఎటువంటి స్వాతంత్ర్యము లేక లోకతంత్రము ? ఈ విషయంపై అంటే లోక సమ్మతిని ఆదరిస్తూ ఉపజీవిక, వ్యాపారమును పరిభాషించడములో విముఖులమై మనము ప్రభుత్వముపై ఒత్తిడి తెచ్చి రాజ్యాంగములో వాంఛిత సంశోధనములు చేయవలెను దానిచే రాసాయనిక ఎరువులు, మాంసము, మద్యము మరియు తంబాకు ఆధారిక ప్రాణాంతక వ్యాపారములను ఆపవలెను.

నిజానికి మనము మాంసాహార విరుద్ధంగా మరియు శాకాహార సమర్థనంలో ఏ ఆందోళన ప్రారంభించబోవుచున్నామో ఆ ఆందోళనము శ్రమ సాధ్యము, వ్యయసాధ్యము మరియు సమయ సాధ్యము అగను కాని ఒకవేళ దేశంలో ఉన్న ధార్మిక, సామాజిక, శైక్షిక, చికిత్సక, సర్వదయి సంస్థలు, పత్ర పత్రికలు మరియు సోషల్ మీడియా కలిసి కట్టుగా ఈ దిశలో ప్రయత్నించినట్లయితే ఈ ఆందోళన యొక్కసకారాత్మక పరిణామముల చేత మన సమాజము లేక రాష్ట్రము సహజముగా లాభాన్వితమగును. అందుకు మీరందరికి మా ప్రార్థన ఏమనగా ఒక సశక్త సభను ఏర్పాటు చేసి, యోజనాయుత మార్గమును స్వీకరించి ఈ ఆందోళనను సఫలము చేయండి.

అనువాదకులు : డా॥ విశ్వశ్రవాచార్య

# రాజకీయ నాయకులకు ఉండాల్సింది రామనీతి

** శ్రీ పీఠాధిపతి, రాష్ట్రీయ హిందూసేన వ్యవస్థాపకుడు పరిపూర్ణానంద స్వామి

ఆర్ష గురుకులంలో యాగశాలను ప్రారంభిస్తున్న పరిపూర్ణానంద స్వామి

**కామారెడ్డి రూరల్, ఫిబ్రవరి 11 :** రాజకీయ నాయకులకు ఉండాల్సింది రాజనీతి కాదని, రామనీతియని, అప్పుడే దేశం బాగుపడుతుందని శ్రీ పీఠాధిపతి, రాష్ట్రీయ హిందూ సేన వ్యవస్థాపకుడు పరిపూర్ణానందస్వామి అన్నారు. మండలంలోని పాతరాజంపేట శివారు ఆర్ష గురుకులంలో ఆదివారం జరిగిన 31వ యోగా శిబిరం ముగింపులో ఆయన పాల్గొని యాగశాలను ప్రారంభించారు. ఈ సందర్భంగా మాట్లాడుతూ, మనం దేశానికి స్వాతంత్ర్యం వచ్చిందని అనుకుంటున్నా కానీ, నిజంగా బ్రిటీష్ వారి ముసుగులోనే పాలన కొనసాగుతుందన్నారు. బ్రిటీష్ వారి కుట్రలు, కుతంత్రాలే ప్రస్తుతం అమలవుతున్నాయని ఆవేదన వ్యక్తం చేశారు. ఒకవేళ మనకు నిజమైన స్వాతంత్ర్యం వచ్చి ఉంటే మన విద్య, సంస్కృతి మరోలా ఉండేవని, జీవన ప్రమాణాలు మారి, ధర్మం నాలుగు పాదాలపై నడిచేదన్నారు. ఇది వ్యవస్థ కాదని, పెద్ద అవస్థయని ఆరోపించారు. ధర్మం పూర్తిగా రాజకీయ నాయకుల కబంధహస్తాల్లో చిక్కుకుందన్నారు. మనవద్ద అద్భుతమైన సంస్కృతి ఉందని, దేశాన్ని నడిపించేది సంస్కృతం, సంస్కృతి అని పేర్కొన్నారు. సంస్కృతంలో రాసేది చదువుతారు, చదివేదే రాస్తారని, ఆంగ్లంలో కొన్ని పదాలు సైలెన్స్‌గా ఉంటాయన్నారు. మనం ఎలా జీవించాలనేది సంస్కృతి నేర్పుతుందన్నారు. ఎక్కడా లేని సంస్కృతి ఆర్ష గురుకులంలోనుందన్నారు. కార్పోరేట్ పాఠశాలలు, ప్రైవేట్ పాఠశాలల్లో విద్యార్థులను సమాజానికి ఉపయోగపడేలా చేయడం లేదని, ఆర్ష గురుకులంలోని విద్యార్థులు ఏ స్థాయిలో ఉన్నా బంధాలు తీసుకోమని, ఇవ్వమని ప్రతిజ్ఞ చేయడం అభినందనీయమన్నారు. ఈ సంస్కృతి అన్ని పాఠశాలల్లో రావాల్సిన అవసరమెంతైనా ఉందన్నారు. విద్యార్థులపై అధిక భారం మోపుతుండడంతో ఎన్నో కార్పొరేట్ పాఠశాలలు, కళాశాలల్లో ఎంతోమంది విద్యార్థులు ఆత్మహత్యలకు పాల్పడుతున్నారని, ఆర్ష గురుకులాల్లోని వేద విద్యార్థులు ఏ ఒక్కరూ చనిపోయిన దాఖలాలు లేవన్నారు. ప్రతీ మనిషికి ధైర్యం ఉంటే ధనం లేకున్నా పర్వాలేదన్నారు. సమాజానికి సంస్కారంతో పాటు ధైర్యాన్ని ఇవ్వాల్సిన అవసరమెంతైనా ఉందన్నారు. అలాగే వైద్యరంగం పూర్తిగా డబ్బుమయమైపోయిందన్నారు. పేద దేశం బాగుపడాలంటే ముందు దీపాలను బయటకు తీసుకురావాల్సిన అవసరమెంతైనా ఉందన్నారు. దేశం ఒక తపోభూమియని, ఇక్కడ ఒక రాముడు, ఒక సీతగా పుట్టాల్సిన అవసరమెంతైనా ఉందన్నారు. రాజకీయ నాయకులకు ఉండాల్సింది రాజనీతి కాదని, రామనీతి కావాలన్నారు. ఉమ్మడి తెలుగు రాష్ట్రాల్లో ధర్మ పోరాటం మొదలైందని, మరింత ఉధృతం చేసేందుకు చర్యలు తీసుకుంటున్నామన్నారు. ఇందులో భాగంగానే రాష్ట్రీయ హిందూసేనను మొదలుపెట్టామన్నారు. ఆర్ష గురుకులం వ్యవస్థాపకుడు బ్రహ్మానంద సరస్వతి, సీఎం కేసీఆర్ గురువు మృత్యుంజయశర్మ, శ్రీధర్‌రావు, విఠల్ రావు, ధర్మవీర్, సునీత, వేదాకర్, మార పెద్ద బాలన్న, బ్రాహ్మణ అధ్యక్ష, కార్యదర్శులు పద్మ, కొత్తపల్లి శ్రీధర్ తదితరులు పాల్గొన్నారు. కార్యక్రమానికి ముందు యోగా సాధకులు నిర్వహించిన పలు విన్యాసాలు పాల్గొన్నవారందరినీ ఎంతగానో ఆకట్టుకున్నాయి.

# పాతంజలి యోగ ప్రదీపిక నుండి

-: జీవుని స్వాభావిక శక్తి : 24 విధములు :-

(ఓ.౩మ్)

1. బల, 2. పరాక్రమ, 3. ఆకర్షణ, 4. ప్రేరణ, 5. గతి, 6. భీషణ, 7. వివేచన, 8. క్రియా, 9. ఉత్సాహ, 10. స్మరణ, 11. నిశ్చయ, 12. ఇచ్ఛా, 13. ప్రేమ, 14. ద్వేష, 15. సంయోగ, 16. విభాగ, 17. సంయోజక, 18. విభాజక, 19. శ్రవణ, 20. స్పర్శన, 21. దర్శన, 22. స్వాదన, 23. గంధ, 24. గ్రహణ జ్ఞానములును.
(ఈ 24 సామర్థ్యములు జీవునకు ముక్తిలోనుండును. వీనితో ముక్తి ఆనందము అనుభవించును.)

• శుద్ధజీవాత్మ

1. చిత్తుకా మండలము. (మామూలు తెలుపురంగు ప్రకాశము).
2. అహంకార మండలము. (నీలిరంగు ప్రకాశము).
3. ప్రాణ మండలము. (గులాబిరంగు ప్రకాశము)
4. ప్రకృతి మండలము. (1. సత్వ, తెల్లరంగు), (2. రజో, ఎర్రరంగు), (3. తమో, నల్లరంగు).
5. బ్రహ్మ మండలము. (అచ్చము బంగారురంగు ప్రకాశము).

## 1. జీవుని అవస్థలు (3) :-

1. జాగ్రతవస్థ. — 2. స్వప్నావస్థ. — 3. సుషుప్తవస్థ.

## 2. కోశములు (5) :-

| 1. అన్నమయ కోశము | 2. ప్రాణమయ కోశము | 3. మనోమయ కోశము | 4. విజ్ఞానమయ కోశము | 5. ఆనందమయ కోశము |
| --- | --- | --- | --- | --- |
| 1. చర్మము<br>2. ఎముకలు, రక్తమాంసాదులు మున్నగు శరీరము. | 5. ప్రాణములు<br>1. ప్రాణము,<br>2. అపానము,<br>3. వ్యానము,<br>4. ఉదానము,<br>5. సమానము. | 5. కర్మేంద్రియములు<br>1. చేతులు, 2. కాళ్ళు (పాదములు)<br>3. నోరు, 4 గుదము,<br>5. మూత్రేంద్రియము. | 5. జ్ఞానేంద్రియములు<br>1. చక్షువు, 2. నాసికము,<br>3. శ్రోత్రము, 4. జిహ్వ,<br>5. త్వక్. | 1. ప్రీతి, 2. ప్రసన్నత<br>3. న్యూనానందము,<br>4. అధికానందం,<br>5. ఆనందమునకాధారమైన కారణరూపము (ప్రకృతి). |

## 3. స్థూలభూతములు (స్థూల శరీరము) (5) :

1. పృథ్వీ 2. జలము. 3. అగ్ని. 4. వాయువు. 5. ఆకాశము.

## 4. సూక్ష్మ శరీరము

[(5. ప్రాణములు) + (5. ఉప ప్రాణములు) + (5. జ్ఞానేంద్రియములు) (5 తన్మాత్రలు) + (మనస్సు + బుద్ధి) = 17 తత్వములు]

| (5. ప్రాణములు) | (5. ఉప ప్రాణములు) | (5. జ్ఞానేంద్రియములు) | (5 తన్మాత్రలు) | మనస్సు | బుద్ధి |
| --- | --- | --- | --- | --- | --- |
| 1. ప్రాణము (గుండెలో). | 1. దేవదత్తము (ఆవులింతలు) | 1. చక్షువు (కన్నులు) | - రూప. | తెలుపు రంగు. | మామూలి పసుపుపచ్చ రంగు. |
| 2. అపానము (గుదేంద్రియము). | 2. కూర్మము (కంటిరెప్పలు) | 2. నాసిక (ముక్కు) | - గంధ. | | |
| 3. వ్యానము (నాభి దగ్గర). | 3. నాగదత్తము (ఎక్కిళ్ళు) | 3. శ్రోత్ర (చెవులు) | - శబ్ద. | | |
| 4. ఉదానము (కంఠంలో). | 4. క్రికలము (ఆకలిదప్పులు) | 4. జిహ్వ (నాలుక) | - రస. | | |
| 5. సమానము(శరీరములో రక్త ప్రసరణ). | 5. ధనుంజయము (మరణాంతము శరీరము వివంచీకృతమగుచున్నది) | 5. త్వక్ (చర్మము) | - స్పర్శ. | | |

ఈ 17 తత్వముల సముదాయము జన్మ-మరణాదులందును జీవుని వెంట నుండును. దీనిని వాహక శరీరమందురు.

## 5. శరీరము లు (4) :

**1. స్థూల శరీరము** — దేహము
1. అన్నమయ కోశము

**2. సూక్ష్మ శరీరము**
2. ప్రాణమయ కోశము.
3. మనోమయ కోశము.
4. విజ్ఞానమయ కోశము.

**3. కారణ శరీరము**
5. ఆనందమయ కోశము :
(దీనిలో జీవుడు సుషుప్తి - గాఢ నిద్రను అనుభవించును. ఇది ప్రకృతి రూపమగుట వలన సర్వత్ర విభువ జీవులందరికి ఒక్కటే శరీరము. జీవునకు గాఢ నిద్రలో కలుగును. ఆనందమునకు, ఈ కారణ శరీరము-ఆధారము. ఇదియే ఆనందమయ కోశముగా చెప్పబడినది.

**4. తురియ శరీరము (స్వాభావిక శరీరము)**
(జీవుని స్వాభావిక గుణములు :)
1. ఇచ్ఛా, 2. ద్వేషము, 3. ప్రయత్నము, 4.సుఖము, 5.దుఃఖము. (ఇవి ముక్తిలో నుండును. దీనితో జీవుడు ముక్తి సుఖమును అనుభవించును). 6.జ్ఞానము.

అనుభవ కర్త:
అచ్చుగట్ల సాంబయ్య ఆర్య
ఇంటి నెం. 3-11-139, వైదికనిలయము,
వీరన్నపేట, (పాలమూరు) మహబూబ్‌నగర్ జిల్లా. - 509001.
అం.ప్ర.
ఫోన్: ~~41578~~ 280015

కృణ్వంతో (ఓ3మ్) విశ్వమార్యం (ఋగ్వేదము)

# 33 దేవతలు.

## జీవునికి - దేవునికి గల బేధము.

మూడు బేధములు.

క్లేశ కర్మ విపాకాశయై రపరామృష్టః
పురుష విశేష ఈశ్వరః - యోగ ౧ - ౨౪

1. క్లేశము. 2. కర్మ. 3. విపాకాశయము.

పై మూడింటితో సంబంధము గలవాడు జీవుడు.

పై మూడింటితో సంబంధము లేనివాడు ఈశ్వరుడు.

1. క్లేశము : (కష్టము) అయిదు విధములు.

1. అవిద్య. 2. అస్మిత. 3. రాగము. 4. ద్వేషము. 5. అభినివేశము.

అ) అవిద్య : ఉన్న వస్తువును ఉన్నట్లు తెలుసుకొనకపోవుట (భ్రాంతి).

-:అవిద్య నాలుగు రకాలు:-

1. అనిత్యాన్ని నిత్యమనుకోవటం (శరీరము).
2. అశుచిని శుచి అనుకోవడం.
3. దుఃఖాన్ని సుఖమనుకోవడం.
4. ఆత్మ కాని దానిని ఆత్మ అనుకోవటం.

ఆ) అస్మిత : బుద్ధికి జీవునికి ఉన్న బేధం తెలియకపోవుట.

ఇ) రాగం : ప్రేమ. (కష్టము కలిగించేది కాదు). (భ్రమ)

ఈ) ద్వేషం : వైర భావం (కష్టము కలిగించేది).

ఉ) అభినివేశం : నేను చావకుండా ఉండాలని అనుకోవడం.

2. కర్మ : మంచి చెడ్డ పనులను చేస్తే వచ్చే ఫలితాలను కర్మలని అంటారు.

3. విపాకాషయము: ఒక పనిని ఎల్లకాలము జ్ఞాపకము ఉంచుకోవటం. "ముద్ర పడడం" (సంస్కారము).

## జీవుడు నవరంధ్రాల గుండా పోతాడు.

1.కండ్లు(2) 2.చెవులు.(2) 3.ముక్కు (2) 4.నోరు.(1)=(7 రంధ్రములు)

5. మూత్రేంద్రియము (1) 6. మలద్వారము (1) = 2 రంధ్రములు)

పై మొదటి ఏడు రంధ్రముల ద్వారా జీవుడు వెళ్లిపోతే మంచి జన్మలు ధరిస్తాడు. మిగిలిన రెండు చెడు రంధ్రముల ద్వారా జీవుడు వెళ్ళిపోతే (మలినములో ఉన్న జీవులు) చెడు జన్మలను ధరిస్తాడు.

| | |
|---|---|
| 1. వసుదేవతలు | 8. |
| 2. రుద్ర దేవతలు | 11. |
| 3. ఆదిత్యదేవతలు | 12. |
| 4. ఇంద్రుడు | 1. |
| 5. ప్రజాపతి | 1. |
| 6. అధిష్టాన దేవత | 1. |
| మొత్తము | 34. |

మూడు విధములగు సాధనములు.

1. తపస్సు. 2. బ్రహ్మచర్యము. 3. శ్రద్ధ.
1. తపస్సుతో శారీరక సాధన.
2. బ్రహ్మచర్యముతో మానసిక సాధన.
3. శ్రద్ధతో ఆత్మిక సాధన.

### 1. అష్టావసవః : వసు దేవతలు 8.

1. భూమి, 2.జలము, 3. అగ్ని, 4. వాయువు, 5. ఆకాశము, 6. సూర్యుడు, 7. చంద్రుడు, 8. నక్షత్రములు (ప్రాణులు నివసించుటకు వీలు కలవి)

### 2. ఏకాదశ రుద్రః-రుద్ర దేవతలు11.

మన శరీరములో 10 ప్రాణాలుంటాయి.

1. ప్రాణము. 2. అపానము. 3. వ్యానము. 4. ఉదానము. 5. సమానము. 6. దేవదత్తము. 7. కూర్మము. 8. నాగము. 9. క్రికలము. 10. ధనుంజయము. 11. జీవుడు.

### 3. ద్వాదశ ఆదిత్యః - ఆదిత్య దేవతలు 12.

12 మాసములు. (ఈ మాసములు సూర్యుని వలన ఏర్పడుతాయి). 'ఆదత్తే ప్రాణ ఇతి ఆదిత్యాః' ప్రాణములను12 నెలలలో గ్రహిస్తుంది. (ఆయుషును తీసుకెళుతుంది.)

4. ఇంద్రః (ఇంద్రుడు) 1 : ఐశ్వర్యము కలిగించే వస్తువు. (విద్యుత్తు).

5. ప్రజాపతిః : ప్రజాపతి 1 : యజ్ఞము. (జీవుల పోషణార్థము)

6. అధిష్టాన దేవత 1 : 34వ దేవత పరమేశ్వరుడు.

జీవుడు, పరమేశ్వరుడు ఈ రెండు చేతన దేవతలు. మిగతా 32 దేవతలు జడ దేవతలు.

(సృష్టిలో ఇంతకన్న మించిన దేవతలు లేరు).

## దూరములు 3 రకాలు.

1. స్థాన దూరము. 2. కాల దూరము. 3. అవిద్య దూరము.

1. స్థాన దూరము : ఒక నగరము నుండి వేరొక నగరమునకు మధ్య గల దూరం

2. కాలదూరము : శ్రీ స్వామి దయానందుల వారు ఆర్య సమాజము 1875లో స్థాపన చేసినారు. అప్పటి నుండి ఇప్పటి వరకు జరిగినది కాల దూరము.

3. అవిద్య దూరము : ఒక వస్తువుని మన దగ్గర పెట్టుకొని మరచి పోతాము. దగ్గర ఉండి కూడా గుర్తించము. ఉదా: చంకలో పిల్లను పెట్టుకొని ఊరంతా వెతికినట్టు. (భగవంతుడు "సర్వంతర్యామి". అంతట ఉన్నవాడు. అతడు మనకు అతి సమీపములో ఉన్నాడు. కాని అవిద్య చేత అతనికి మనము దూరముగా ఉన్నాము.)

## దేవత అంటే. (మనిషిని)

(ఈ దిగువ నిర్వచనము)

దేవత అంటే వేదాలకు భాష్యము వ్రాసిన వాడు "యాస్కాచార్యుడు" ఇలా చెప్పినాడు.

1. దానాద్వా : (దాన గుణము వల్ల)
2. ద్యోతనాద్వా : (తాను స్వంత ప్రకాశము వలన)
3. దీపనాద్వా : (దీపము మాదిరిగా తాను ప్రకాశిస్తూ ఇతరులకు ప్రకాశింపచేసేది)
4. ద్యుస్థానము : (సూర్యుడు, చంద్రుడు, నక్షత్రాలు ఇతరులు)

ఇవి వెలుగును, దానాన్నిస్తూ, ఫలితాన్ని ఆశించవు. (అందువల్ల మనుష్యులలో ఇవి కలవారిని దేవతలంటారు)

## భగవానుడంటే (మనిషిని).

(ఈ దిగువ నిర్వచనము)

భగవంతుడంటే భగము కలవాడు.

1. ఐశ్వర్యము గలవాడు. 2. ధర్మము చేయువాడు. 3. యషస్సు (కీర్తి) సంపాదించువాడు. 4. సంపద కలవాడు. 5. జ్ఞానము కలవాడు. 6. వైరాగ్యము కలవాడు.

ఈ పై 6 గుణములు ఉన్నవాళ్లే భగవానుడు అని పిలువబడును.

## 4. వేదములు.

1. ఋగ్వేదము. 2. యజుర్వేదము. 3. సామవేదము. 4. అథర్వణ వేదము.
(జ్ఞాన) (కర్మ) (ఉపాసన) (విజ్ఞానము)

1. జ్ఞానము : ఋగ్వేదములో ఉన్నది. (బ్రహ్మచర్యాశ్రమము)
2. కర్మ : యజుర్వేదములో ఉన్నది. (గృహస్థాశ్రమము)
3. ఉపాసన : సామవేదములో ఉన్నది. (వానప్రస్థాశ్రమము)
4. విజ్ఞానము : అథర్వణ వేదములో ఉన్నది. (సన్యాసాశ్రమము)

ఫోన్ : 41578 290016
అచ్చుగట్ల సాంబయ్య ఆర్య
ఇంటి నెం : 3-11-39, వైదిక నిలయం, వీరన్నపేట, పాలమూరు,
మహబూబ్‌నగర్ జిల్లా - 509 001. ఆం.ప్ర.

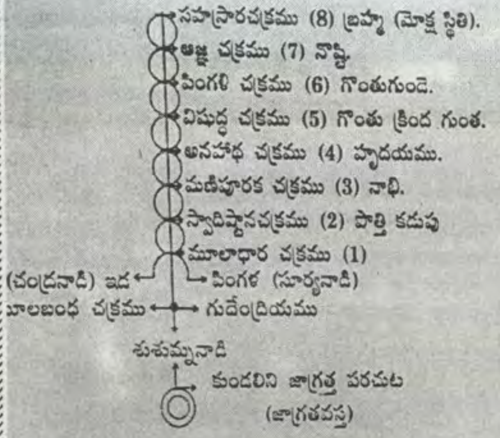


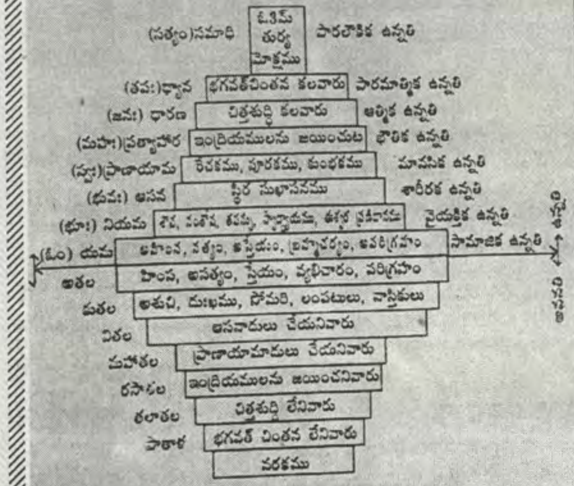


కృణ్వంతో ≡(ఓ3మ్)≡ విశ్వమార్యం (ఋగ్వేదము)

# అష్టచక్రములు మరియు అష్టాంగ యోగముల వివరణ

| వ. నెం. | చక్రములు | అంగుళముల నిలయములు | దళములు | రంగులు | గడియలు (1 గడియకు 24 ని॥లు) విగడియలు (మనుష్యుని ఒకరెప్పపాటు కాలము 12 వి.ఘ.) | జపము |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | 2 | 3 | 4 | 5 | 6 | 7 |
| 1. | మూలాధార చక్రము (గుదేంద్రియము) | ఇది పృథ్వితత్వము గలదై | నాలుగు రేకులు | పసుపు రంగుతో వెలుగుచుండును | 1......................40 | ఆరువందల హంస జపము జరుగును. |
| 2. | స్వాదిష్టానచక్రము (పొత్తి కడుపు) | పైన 2 అంగుళములలో జలస్థానమై | ఆరు దళములు వెలుగుచుండును. | తెలుపు వర్ణమున | 16......................40 | ఆరువేల హంస జపము జరుగును. |
| 3. | మణిపూరక చక్రము (నాభి) | పైన 3 అంగుళములలో అగ్ని నిలయమై | పది దళములు | ఎరుపు రంగుతో వెలుగుచుండును. | 16......................40 | ఆరువేల హంస జపము జరుగును. |
| 4. | అనహోతచక్రము (హృదయము) | పైన 10 అంగుళములలో వాయు నిలయమై | పన్నెండు దళములు | పొగ వర్ణముతో వెలుగుచుండును. | 16......................40 | ఆరువేల హంస జపము జరుగును. |
| 5. | విషుద్ధ చక్రము (గొంతుక్రింద గుంత) | పైన 12 అంగుళములలో కంఠమందున గగననిలయమై | పదహారు దళములు | నీలిరంగుతో వెలుగుచుండును. | 2......................45 | వెయ్యి హంసల జపము జరుగును. |
| 6. | పింగళి చక్రము (గొంతుగుండె) | పైన 2 అంగుళములలో కంఠమందున గగననిలయమై | పదహారు దళములు | నీలిరంగుతో వెలుగుచుండును. | 2......................45 | వెయ్యి హంసల జపము జరుగును. |
| 7. | ఆజ్ఞా చక్రము (నొస్టి) | పైన 12 అంగుళములలో భ్రూమధ్యమున అంతఃకరణకు నిలయమై | రెండు దళములు | శుద్ధ వర్ణమున వెలుగుచుండును. | 2......................40 | వెయ్యి హంసల జపము జరుగును. |
| 8. | సహస్రార చక్రము (బ్రహ్మ రంధ్రము) | ఈ చక్రములకు నడినెత్తిపైన బ్రహ్మారంధ్రము ఒకటున్నది. ప్రణవనిలయమై తేజోమయమై | వెయ్యి దళములు | కమలమందున వెలుగుచుండును. (కుండలి ప్రవేశము) | 2......................6 | వెయ్యి హంసల జపము జరుగును. |

(ఏకాగ్రతతో మనసు నిలిపిన ఓంకారము వినిపించును)

-: ఓం శాంతిః శాంతిః శాంతిః :-

అచ్చుగట్ల సాంబయ్య ఆర్య ఫోన్ : 41578
ఇంటి నెం : 3-11-39, వైదిక నిలయం, వీరన్నపేట, పాలమూరు,
మహబూబ్‌నగర్ జిల్లా - 509 001. ఆం.ప్ర.

# A perverse ploy

## I am a man of faith. The cynical political calculation of Ram Janmabhoomi movement is intolerable to me

SWAMI AGNIVESH

I SHALL DIE a miserable wretch if I don't utter the truth I know. I follow Maharshi Dayanand. He saw paramatma (or God) as the light of truth. And truth cannot be stretched to suit convenience nor shrunk to fit cowardice.

The Ram Janmabhoomi movement is a political ploy, conceived in cynical electoral calculations, in which the faith of the masses is deployed only as firepower and fraudulently projected as religious fervour. I am surprised that anyone can determine the exact place of Lord Ram's birth, born thousands of years ago. The question of someone usurping Ram Lalla's real estate comes only if the exact spot of his birth is determined. There are 16 rival claimants to this distinction in Ayodhya itself.

I have participated in various efforts to settle this dispute from the time of Rajiv Gandhi. Rajiv must bear a large share of the blame for reviving this imbroglio. If ever there was a monument to the appeasement politics of the Congress, it is this issue. The party played both sides of the game. And who does not know that P V Narasimha Rao, as prime minister in 1992, connived in the demolition of the masjid, if only to get a thorn out of his path?

I participated in Prime Minister V P Singh's effort to settle the dispute. L K Advani was offered a vast stretch of land, adjoining the site of the mosque — nearly 60 acres, in lieu of 2.7 acres. It was his shrewd unwillingness to settle the dispute that made him invent the obstinate slogan, "mandir wahin banayenge". Justice Krishna Iyer, B G Verghese and I pursued the issue with Prime Minister Chandra Shekhar and, when matters seemed poised for a settlement, Rajiv Gandhi became worried that the credit would go to the then PM, and he brought down the four-month-old Union government on a flimsy pretext.

All along, the Muslim side of the dispute was eager to have the matter settled. I was in regular touch with Syed Shahabuddin, who was then convener of the Babri Masjid Action Committee. Then, as now, all they wanted was an assurance that other mosques would not be targeted once this ground was conceded. They also wanted an honourable exit from this issue. When they say, "let the court decide", that is precisely what they mean. It is regrettable that the courts in this country haven't addressed the matter head on.

My main concern is that people are being perversely misled, and their credulity exploited for political gains by those who do not care a pin for the spiritual greatness of the Vedic faith. As an ardent devotee of this incomparable spiritual heritage, I feel cheated and violated.

I have examined this matter, looking for some evidence with which to persuade a blank. Tulsidas, the greatest Ram bhakt of all time, who lived at the time when the temple is alleged to have been destroyed by Mir Baqi in 1528, by the river Sarayu, does not mention it. Nor do Guru Gobind Singh, or Shivaji, or Vivekananda, or Dayanand. There is not a shred of credible evidence to legitimise this dance of aggression, which mocks God. This should be obvious to all from the assertion that "matters of faith are not justiciable". I am a man of faith. So, I need to say: This is an unthinkably dangerous stand to take. Every atrocity, every crime, every injustice can be justified by dressing it up as faith. Faith must be rational. Blind faith is dangerous.

What hurts me most is the utter irrationality of this communal agenda. If we say that Ram is God, and God is omnipresent — and God cannot be omnipresent unless he is formless — how can we fix him to a tiny spot in a geographic location? It is an outright insult to human intelligence; what to say of the majesty of God? And it exasperates me that millions are being misled and their souls corrupted with communal hatred, using this palpable falsehood mouthed in the name of Lord Ram.

Gandhi too was a Hindu. He died with the name of Ram on his lips. His devotion cannot be doubted. Not only did the Ram Mandir issue not matter to him, he was clear that temples — indeed all places of worship — do not possess the godliness they claim. He could not accept, being a rational human being, that God sat in the form of an idol in any temple, church or mosque. Gandhi rarely wasted his time in temples; because he was in communion with God everywhere. Whenever he visited temples, he complained of their uncleanness. Sacred cities were also the dirtiest.

Hinduism, unlike Christianity or Islam, is about family-oriented spirituality. We know that God is not partial to priests. So, our home is also our temple. Only when the Vedic vision declined and caste interests gained the upper hand did priests become middle men for us. Since then, the Sanatan faith has languished under the tyranny of the priestly class, who dimmed its light with superstition, exploitative ritualism and crippling obscurantism. This has been the main reason for our weakness as a people. So, we fell easy prey to forces from beyond our borders. A bunch of Mughal conquerors and later, a rag-tag group of English merchants conquered one of the largest human collectives in history.

India will never progress unless we rid the Sanatan community of its accretion of superstition and irrationality. The Ram Janmabhoomi movement is a regression to irrationality and communal perversity. It is cast as a religious war against a community to pander to cheap popular sentiments. Only those who do not know the Vedic faith can think of this as windfall for Hinduism. I know and love this faith, and I cannot swallow its perversion for that very reason.

*The writer is a Vedic scholar and social activist*

Dateof Publication 2nd & 17th of every Month, Date of posting 3rd and 18th of every month
आर्य जीवन 18-02-2018 Registered-Reg. No. HD/783/2018-20 RNI No. 52990/93

# ఆర్య జీవన్

హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Editor: **Vithal Rao**, M.Sc. LL.B., Sahityaratna
Arya Prathinidhi Sabha AP-Telangana, Sultan Bazar, Hyderabad-95.
Phone No. 040-24753827, 66758707, Fax : 040-24557946
Request to donate Rs. 250/- సంపాదకులు : విఠల్ రావు, మంత్రి సభ

To,

## దయానంద సరస్వతి

[illegible]

అంతర్వాణి

[illegible]

– డాక్టర్ అయాచితం నటేశ్వరశర్మ

కీ॥ శే॥ పసుపర్తి వెంకటేశ్వర రావు గారికి
ఆర్య ప్రతినిధి సభ వైపున

## శ్రద్ధాంజలి

పెద్దపల్లి గ్రామం (కరీంనగర్) ఆర్య సమాజ్ వ్యవస్థాపకులు, సేవాపరాయణులు పసుపర్తి వెంకటేశ్వర రావు గారు 03 ఫిబ్రవరి 2018 శనివారం, రోజున తమ 85వ ఏట దివంగతులయ్యారు. మహర్షి దయానంద్ సరస్వతి అనన్య భక్తులు, ఆదర్శ ఆర్య సమాజికులు, వైదికధర్మ ప్రచారానికి, వైదిక సాహిత్య ప్రచురణల ద్వారా, ఆర్య విద్వాంసుల ఉపన్యాసాల ద్వారా, అనేక కార్యక్రమాలు నిర్వహించి, శాయశక్తుల కృషి చేశారు. వివిధ ధార్మిక, సామాజిక, సాంస్కృతిక రంగాలలో కూడా ఎనలేని సేవలందించి కీర్తి గడించారు. అట్టి సేవా పరాయణున్ని కోల్పోవుట, వారి కుటుంబానికే కాకుండా, సామాజిక రంగానికి కూడ తీరనిలోటు.

ఆర్య ప్రతినిధి సభ, ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ తరపున వారికి శ్రద్ధాంజలి ఘటిస్తున్నాము. భగవంతుడు వారి ఆత్మకు, శాంతిని, సద్గతినీ ప్రసాదించాలని ప్రార్థిస్తున్నాము. వారి కుంబ సభ్యులకు మా ప్రగాఢ సానుభూతిని తెలియజేస్తున్నాము.

కీ॥ శే॥ అచ్చుగట్ల సాంబయ్య మహబూబ్‌నగర్ గారికి

ఆర్య ప్రతినిధి సభ వైపున

## శ్రద్ధాంజలి

చౌదరిగూడెం వాస్తవ్యులైన శ్రీ అచ్చుగట్ల సాంబయ్య ఆర్య గారు 1965 ప్రాంతము నుండి మహబూబ్‌నగర్‌లోనే నివసిస్తు వచ్చారు. శ్రీ సాంబయ్య గారికి ఆర్య సమాజము పట్ల అమితమైన అభిమానం. ఆర్య సమాజ సిద్ధాంతాలతో ఏనాడు రాజీపడి వక్రీకరించలేదు. తూచ తప్పకుండా సిద్ధాంతాలను అనుసరించి జీవించాలని ప్రతిఒక్కరికి చెప్పేవారు. అవసరమైతే కఠోరముగా చెప్పేవారు. సామాన్య కుటుంబములో జన్మించిన సాంబయ్య గారు తన ప్రతిభను పెంచుకుంటు ప్రభుత్వము ద్వార మాస్టర్ కటర్‌గా నియమింపబడ్డారు. ప్రభుత్వంలో దాదాపుగా 33 సం॥రాలు పనిచేసి ఎంతో మందికి కుట్టుమిషన్ నేర్పించడంలో కృత-కృత్యులు అయ్యారు. ఏ స్థానంలో ఏక్కడ పనిచేసిన ఆర్య సమాజ సిద్ధాంతములను ప్రచారం చేసేవారు. ఆర్య సమాజానికి అమూల్యమైన సేవలందిచిన సాంబయ్య గారు ఫిబ్రవరి 11వ తేదినాడు స్వర్గస్థులయ్యారు. 12వ తేదినాడు మహబూబ్‌నగర్‌లో వైదిక రీతిని అనుసరించి అంతక్రియలు నిర్వహించడం జరిగినది. అంతక్రియలో ఆర్య సమాజ్ మహబూబ్‌నగర్‌కు సంబంధించిన అధికారులు, కార్యకర్తలు, పురోహితులు మరియు ఆర్య ప్రతిసభ మంత్రి శ్రీ విఠల్ రావు గారు పాల్గొన్నారు. 13వ తేదినాడు ఆర్య సమాజ్ మహబూబ్‌నగర్ కీ॥ శే॥ సాంబయ్య గారికి శ్రాద్ధంజలి ఘటించడము కూడ జరిగినది. కీ॥ శే॥ సాంబయ్య గారికి ఆర్య ప్రతినిధి సభ పక్షాన వినమ్రత శ్రద్ధ సుమాంజులు.

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUE MAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR
*Editor* : Vithal Rao Arya ● Email : acharyavithal@gmail.com, Mobile : 09849560691

సంపాదకులు : శ్రీ విఠల్‌రావు ఆర్య మంత్రి సభ, ఆర్యప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ, సుల్తాన్‌బజార్, హైదరాబాద్-95. Ph: 040-24753827, Email:acharyavithal@gmail.com
संपादक : श्री विट्ठलराव आर्य मंत्री सभा ने सभा की ओर से समता आकृति प्रिन्टर्स में मुद्रित करवा कर प्रकाशित किया ।
प्रकाशक: आर्य प्रतिनिधि सभा आं.प्र.-तेलंगाना, सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद तेलंगाना-500095.